सहस्रनामत्रयम्

श्रीकविकर्णपूरविरचितं श्रीकृष्णचैतन्यचन्द्रसहस्रनामस्तोत्रम्,
श्रीरूपगो० पादविरचितं श्रीकृष्णचैतन्यदिव्यसहस्रनामस्तोत्रम्,
श्रीमन्नरहरिसरकारठाकुरविरचितंश्रीकृष्णचैतन्यसहस्रनामस्तोत्रम्

श्रीमदद्वैताचार्य्यप्रभुविरचित श्रीगौराङ्गप्रत्यंगवर्णनाख्यस्तवराजरत्नेन,
श्रीश्रीवासुदेवसार्वभौमभट्टाचार्य्यविरचितश्रीनित्यानंद-
चन्द्रस्य नामद्वादशक-श्रीगौरांगद्वादशनाम-श्रीचैतन्यशतक-
श्रीगौरांगाष्टोत्तरशतनामस्तोत्रैर्विभूषितं तथा मध्यतः
जगदाधारस्य श्रीमन्महाप्रभोः मुखोद्गीर्ण-
श्रीराधिकाष्टोत्तरशतनामस्तोत्ररत्नेन
परिपोषितम्

गौरपूर्णिमा (फाल्गुनी)
सं० २०१२

प्रकाशक-कृष्णदास
(कुसुमसरोवर वाले)

प्रथमावृत्ति १०००

भज-निताइगौरराधेश्याम ।
जप-हरे कृष्ण हरे राम ॥

परमाराध्य, संकीर्त्तनप्रचारक, प्रेममयविग्रह, श्रीराधारमणचरणदासदेव (वडेवावाजी) के अनुगत, नित्यधामगत, श्रीगुरुदेव बाबाजिमहाराज (१०८श्रीरामदास बावा) के प्रसन्नार्थ यह सहस्रनाम-त्रय अथवा स्तोत्ररत्ननवक समर्पित है।

दो शब्द !

चौषठ अंग भक्ति के बीच स्तवपाठ भी एक विशेष भक्तिअंग माना जाता है। उससे भक्ति का उद्बोधन होता है तथा इष्ट साक्षात्कार की सम्यक् अनुभूति होती रहती है । अतः भक्तिशास्त्रों में जगह-जगह पर स्तव की विधी दिखलाई गई है। प्राचीन आचार्य्यों ने जीवों के कल्याणार्थ नाना स्तव-स्तोत्र की रचना की है । कलिकाल के उपास्य देव श्रीराधागोविन्द हैं अथवा दोनों के मिलित विग्रह श्रीगौरांगदेव हैं। शास्त्र-तन्त्रादिक में मुनि-ऋषियों के द्वारा विरचित "गोपालसहस्रनाम" "राधिकासहस्रनाम" "ललितासहस्रनाम" इत्यादि बहुसहस्रनाम विद्यमान हैं । प्रभु के नित्यपरिकर श्रीपाद-रूपगोस्वामी आदिक पूर्वाचार्य्यों ने महाप्रभु के नाम-रूप-गुण-लीला से सम्वलित विविधस्तोत्र-अष्टक-शतनाम-सहस्नामादिकों की उद्भावना की है । सहस्नाम का नित्यपाठ करने की महान् विधि है तथा उससे शीघ्र ही प्रभु सान्निध्य लाभ होता है और मनुष्य प्रेमधन में धनी बन जाता है। अतएव हम, सबके उपयोग के लिये नित्यपाठरूप कुछ स्तोत्र का संग्रह कर देवाक्षर में प्रकाशन करने को उत्सुक हुए तथा प्रभु कृपा से सफलता प्राप्त की। इस संग्रह में अद्वैतप्रभु के द्वारा विरचित महाप्रभु के प्रत्यंगवर्णनस्तवराज तथा सार्वभौमभट्टाचार्य्य महोदय के द्वारा विरचित चैतन्यशतक का सन्निवेश करना महान् आवश्यक समझा। श्रीरूपगोस्वामीजी-प्रभु तथा श्रीपादकविकर्णपूर और श्रीमन्नरहरिसरकार ठाकुर, श्रीअद्वैतप्रभु, श्रीसार्वभौमभट्टाचा-

य्यादि महानुभाव,गौरांगपरिकरोंके इतिवृत्त वंगभाषावैष्णव-साहित्य एवं संस्कृतभाषावैष्णव साहित्य में बहुविस्तार से सुवर्णित है।

श्रीश्रीअद्वैतप्रभुः—आप गौरांगदेव के प्रधान परिकर, पञ्चतत्व में एकतम, श्रीपादमाधवेन्द्रपुरी के शिष्य हैं। श्रीहट्ट के लाउडग्राम में १३५५ शकाब्द माघ शुक्ला सप्तमी तिथि में वारेन्द्र ब्राह्मणवंश में आपका जन्म हुआ। पिता का नाम कुवेरपण्डित तथा माता का नाम नाभादेवी था। अद्वैतप्रभु का पूर्वनाम कमलाक्ष वेदपञ्चानन था। आप लाउडग्राम से नवहट्ट तथा वहाँ से शान्तिपुर आकर निवास करते थे। इनकी सीतादेवी तथा सुदेवी करके दो पत्नियाँ थीं। १४८० शकाब्द १२५ वर्ष वयःक्रम में आप अप्रकट हुए। पूर्वलीला में आप देवादिदेव महादेव माने जाते थे। सीतादेवी के गर्भ से अच्युतानन्द,कृष्णदास,गोपाल,वलराम,स्वरूप तथा जगदीश का एवं श्रीदेवी के गर्भ से श्यामदास (छोटे) का जन्म हुआ था।

वासुदेवसार्वभौमभट्टाचार्य्यः—चौदहशक(शताब्दी)के प्रथमभाग में आपका जन्म हुआ था। पूर्वलीला में आप वृहस्पति माने जाते थे। आप दर्शनशास्त्र के धुरन्धर विद्वान थे। मिथिलादेश से आपने समस्तन्याय को कंठ कर वहाँ से अपने देश में उसका प्रचार किया है। जब से नवद्वीप न्याय का केन्द्र बना। पश्चात् राजा प्रतापरूद्रदेव के परम आग्रह से नीलाचल में वास करने लगे तथा वहाँ ही प्रभु के अनुगत होकर महान वैष्णव हो गये।

श्रीनरहरिसरकार ठाकुरः—लगभग १४०० शकाब्द में श्रीखण्ड में आपका आविर्भाव हुआ था। आप पूर्वलीला में श्रीराधिका की मधुमती नामक सखी थी। नवद्वीप में अध्ययन के समय महाप्रभु के साक्षात् प्राप्त हुए तथा वहाँ ही उनके चरण में विक्रीत हो गये। महाप्रभु के मन्त्रादिक उद्भावना में आप प्रधान मुनि हैं। रसराज-

महाभाव की उपासना आपके द्वारा ही सम्यक् प्रचारित हुई। आपके द्वारा विरचित "श्रीभक्तिचन्द्रिका" "श्रीकृष्णभजनामृत" "श्रीचैतन्यसहस्रनाम" "नामामृतसमुद्र" "भावनामृत" ग्रन्थ हैं। भक्तिचन्द्रिका में आपने गौरांगमन्त्र तथा सेवा की विशेष आलोचना के साथ प्रतिपादन किया है। श्रीकविकर्णपूरमहोदय के तथा श्रीरूपगोस्वामी प्रभु के चरित्र प्रसिद्ध है।

आनन्दवृन्दाबनचम्पू आदिक ग्रन्थ के रचयिता श्रीपादकविकर्णपूर महोदय के द्वारा विरचित श्रीकृष्णचैतन्यसहस्रनाम-स्तोत्र पहले गुरुदेव बाबाजीमहाराज के आदेश से निताइसुन्दर पत्रिका में वंगाक्षर में प्रकाशित हो गया था। श्रीपाद रूपगोस्वामिमहोदय के द्वारा विरचित यह श्रीकृष्णचैतन्यदिव्यसहस्रनाम-स्त्रोत्र अनेक स्थल पर मौजूद है। श्रीयुक्त पूज्य अद्वैतचरणगोस्वामी जी (वृन्दावन) के पुस्तकालय में दो हस्तलिखित प्रतियाँ तथा हमारे पास दो हस्तलिखित प्रतियाँ मौजूद हैं। यह पहले श्रीशरच्चन्द्रशील-महोदय (३१६ अपारचित्पुररोड) के द्वारा कलकत्ता से वंगाक्षर में प्रकाशित हो गया है। मैंने कई प्रतियों को मिलाकर देखा कि सब में लिपीकार के भ्रम के वश विशुद्ध लेख नहीं है। तो भी मैंने सबको मिला कर यथाशक्ति एक शुद्ध प्रेस कापी का प्रस्तुत कर प्रकाशन क्षेत्र में लाया। महानुभावों के लेखन में कोई व्यतिक्रम दोष न आ जावे इस लिये भयभीत होकर परिवर्त्तन करने में असमर्थ रहा। श्रीपादरूपगोस्वामी प्रभु के द्वारा विरचित इस सहस्रनाम में कुछ स्थलों में लिंग–विभक्ति का व्यतिक्रम अवश्य देखन में आ रहा है। जैसा कि "श्रीराधा राधिकानन्ता कृष्णाराध्या च कृष्णदा" इत्यादिक स्थल में लिंग का परिवर्त्तन है। सिद्धान्त में इसका कोई विरोध नहीं है। क्यों कि ग्रन्थकार ने

महाप्रभु के राधिकास्वरूप का लक्ष्य करके इस प्रकार स्त्रिलिंग का प्रयोग दिया । महाप्रभु में श्रीराधा-गोविन्द दोनों स्वरूप की विद्यामानता है यह सिद्धान्त सुनिश्चित है । क्यों कि राधाभाव-कान्ति से ही ढक कर व्रज के नीलमणि, नन्दनन्दन श्रीकृष्ण गौरांगस्वरूप में अवतीर्ण हुए हैं । श्रीपादकविकर्णपूर ने निज विरचित "चैतन्यचन्द्रोदयनाटक" के प्रारम्भ में कहा है कि— "राधाकृष्णाख्यलीलामयखगमिथुनं भिन्नभावेन हीनम्" अर्थात् उस गौरांगकल्पवृक्ष में राधा-कृष्ण नामक दो लीलामय खगमिथुन भिन्न भाव में लीन है ।" दूसरी बात यह है कि इस सहस्रनाम-स्तोत्र में आपाततः संख्या का कुछ कम देखने में आता है। परन्तु यथार्थ विचार में परे सहस्रनाम ही निकलते हैं । यह इसमें विशेषता है । समस्त प्रतियों में श्रीरूपगोस्वामी-पादविरचित करके उल्लेख है । श्रीश्रीनरहरि सरकार ठाकुर महोदय के द्वारा विरचित श्रीकृष्णचैतन्यचन्द्र सहस्रनाम स्त्रोत्र पहले "गौरांगमाधुरी" पत्रिका में श्रीखण्ड से वंगाक्षर में प्रकाशित हुआ था । हमारे बड़े गुरुभैय्या पूज्य श्रीरजनीदासजी ने उसका नकल करवा कर यथा समय हमें प्रदान किया । मैं भी परम उत्सुक होकर प्रभु की कृपा मान कर इन सबको प्रकाशित करने में उद्यत हुआ । बहुत सुन्दर तथा सबके उपयोगी तब होता जब कि इन सबको अनुवाद के साथ प्रकाशित किया जाता । परन्तु नामों की संख्या स्पष्ट है इसलिये वर्त्तमान इस कार्य्य से विरत रहा । निष्ठा के साथ पठन-पाठन करने वाले प्रेमि वैष्णवों के हृदय में स्वयं स्तोत्र के अधिदेव श्रीमन्गौरांगमहाप्रभु स्फूरित होकर नामों का अर्थज्ञान करवा देंगे इसमें कोई सन्देह नहीं है ।

शान्तिपुरनाथ, सीतापति, महारूद्रावतार, गौरांग के परिकर

प्रधान श्रीअद्वैतप्रभु ने श्रीमन्महाप्रभु के प्रत्यंगवर्णन नामक स्तोत्र की रचना की। उसमें महाप्रभु के समस्त अंगों का सुचारु-सरस वर्णन है। यह तो वैष्णवों के नित्यपाठार्थ महान अनर्घ्य धन है। इस स्तोत्र को अनुवाद के साथ इस संग्रह में सञ्चित किया गया है और भी सार्व-भौमभट्टाचार्य्य जी के द्वारा विरचित "श्रीश्री-गौरांगाष्टोत्तरशतनामस्तोत्र", "श्रीनित्यानन्दचन्द्रस्य नाम द्वादश" "श्रीगौरांगनामद्वादश" ये तीनों स्तोत्र इस संग्रह में रख दिये गये हैं। श्रीपाद सार्वभौमभट्टाचार्य्य महोदय के द्वारा विरचित "चैतन्यशतक" गौरांगमहिमा परक एक महान् उपादेय वस्तु है। इसकी भाषा अतिसरल तथा सुललित है। ग्रन्थकार आप धुरन्धर दार्शनिक पण्डित होते हुए भी सर्वसाधारण के सहज बोधार्थ सरलभाषा में उसकी रचना कर गये हैं। यह इसमें विशेषता है। महाप्रभु के प्राकट्य के समय समस्तभारत में दार्शनिक क्षेत्र में दो परम पण्डित माने जाते थे। एक तो वृन्दावनशतकादि ग्रन्थों के रचयिता श्रीपादप्रबोधानन्द-सरस्वतीजी दूसरे श्रीलवासुदेव-सार्वभौमभट्टाचार्य्यमहोदय। इन दोनों की विद्वत्ता के समक्ष बड़े-बड़े दार्शनिक आचार्य्यों का हृत्कम्प हो जाता था। उनके साथ विचार करने की बात तो दूर रही। परन्तु ये दोनों पहले महान् अद्वैतवादी-ज्ञानीशिरोमणि हैं पश्चात् महाप्रभु की कृपा-दृष्टि सागर में वह कर परम रसिक-वैष्णव हो गये। श्रीसार्वभौम के द्वारा विरचित इस चैतन्यशतक को सानुवाद सबके समक्ष रखा गया। इसका पठन पाठन से निश्चय महाप्रभु में सुदृढ़ निष्ठा होती है तथा प्रभु के परिकर वन जाने में योग्यता आ जाती है। परिशेष में इन सब स्तोत्रों के पोषकरूप, स्वयं श्रीमन्महाप्रभु के मुखारविन्द विनिर्गत "श्रीराधिकाष्टोत्तरशतनाम" स्तोत्र रूप

महामकरन्दरस का सम्पूट दिया गया है। यह स्त्रोत्ररत्न मुझे उस समय मिला कि जब वह यमुना में प्लावित होने को जा रहा था। इसकी प्राचीन प्रति हमारे पास मौजूद है। पहले यह स्तोत्र निताइसुन्दरपत्रिका में छप भी गया है। "महाप्रभुग्रंथावली" का प्रकाशन के समय हमें यह स्तोत्र मिला नहीं था"। महाप्रभु-ग्रन्थावली के द्वितीय संस्करण प्रकाशन के समय यह स्तोत्र उसमें सन्निविष्ट किया जावेगा हृदय में ऐसी आशा है। अस्तु प्रेमी पाठक इस ग्रन्थ संग्रह को पठन पाठन कर हमारे परिश्रम को सफल करेंगे—

आजानुलम्बितभुजौ कनकाबदातौ
संकीर्त्तनैकपितरौ कमलायताक्षौ।
विश्वम्भरौ द्विजबरौ युगधर्म्मपालौ
बन्दे जगत्प्रियकरौ करुणाबतारौ॥

विनीत-

कृष्णदास

श्री श्रीशिवानन्दात्मजश्रीकविकर्णपूरविरचितं

श्रीकृष्णचैतन्यसहस्रनामस्तोत्रम् ।

नमस्तस्मै भगवते चैतन्याय महात्मने ।
कलिकल्मषनाशाय भवाब्धितारणाय च ॥
ब्रह्मणा हरिदासेन श्रीरूपाय प्रकाशितम् ।
तत्सर्व्वं कथयिष्यामि सावधानं निशामय ॥
श्रुत्वैवं वैष्णवाः सर्व्वे प्रहृष्टाः प्रेमविह्वलाः ।
सादरं परिपप्रच्छुः प्रेमगद्गदया गिरा ॥
वैष्णवानां हि कृपया स्मृत्वा वाक्यं पितुस्तदा ।
संचिन्त्य भगवद्रूपं नामानि कथयामि वै ॥

ओं नमो नारायण ऋषिरनुष्टुप् छन्दः श्रीमद्भगवद्भक्तिर्देवता श्रीराधाकृष्णप्रीतये श्रीकृष्णचैतन्य-नामसहस्रपाठे विनियोगः।
ओं नमः प्रेमसमुच्चयाय गोपीजनवल्लभाय महात्मने ॥

ओं विश्वम्भरः सदानन्दो विश्वजिद् विश्वभावनः ।
महानुभावो विश्वात्मा गौरांगो गौरभावनः ॥
हेमप्रभो दीर्घबाहु दीर्घग्रीवः शुचिर्व्वसुः ।
चैतन्यश्चेतनाश्चेता-श्चित्तरूपी प्रभुः स्वयम् ॥
राधाङ्गी राधिकाभावो राधान्वेषी प्रियम्वदः ।
नीतिज्ञः सर्व्वधर्म्मज्ञो भक्तिमान् पुरुषोत्तमः ॥
अनुभावी महाधैर्य्यः शास्त्रज्ञो नित्यनूतनः ।
प्रभावी भगवान् कृष्णश्चैतन्यो रसविग्रहः ॥
अनादिनिधनो धाता धरणीमण्डनः शुचिः ।
वराङ्गश्चञ्चलो दक्षः प्रतापी साधुसङ्गतः ॥
उन्मादी उन्मदो वीरो धीरग्राही रसप्रियः ।

रक्ताम्बरो दण्डधरः सन्न्यासी यतिभूषणः ॥
दण्डी छत्री चक्रपाणिः कृपालुः सर्व्वदर्शनः ।
निरायुधः सर्व्वशास्ता कलिदोषप्रणाशनः ॥
गुरुवर्य्यः कृपासिन्धु र्व्विक्रमी च जनार्द्दनः ।
म्लेच्छग्राही कुनीतिघ्नो दुष्टहारी कृपाकुलः ॥
ब्रह्मचारी यतिवरो ब्रह्मण्यो ब्राह्मणः सुधीः ।
द्विजराजश्चक्रवर्त्ती कविः कृपणवत्सलः ॥
निरीहः पावकोऽर्थज्ञो निर्धूमः पावकोपमः ।
नारवृन्दो नराकारो भविष्णु र्नरनायकः ॥
दानवीरो युद्धवीरो दयावीरो वृकोदरः ।
ज्ञानवीरो महावीरो शान्तिवीरः प्रतापनः ॥
श्रीजिष्णु र्भ्रमिको जिष्णुः सहिष्णुश्चारुदर्शनः ।
नरो वरीयान् दुर्द्दर्शो नवद्वीपसुधाकरः ॥
चन्द्रहास्यश्चन्द्रनखो वलिमदुदरो वली ।
सूर्य्यप्रभः सूर्य्यकांशुः सूर्य्याङ्गो मणिभूषणः ॥
कम्बुकण्ठः कपोलश्री र्निम्ननाभः सुलोचनः ।
जगन्नाथसुतो विप्रो रत्नाङ्गो रत्नभूषणः ॥
तीर्थार्थी तीर्थदस्ती र्थस्तीर्थाङ्गस्तीर्थसाधकः ।
तीर्थास्पदस्तीर्थवासस्तीर्थसेवी निराश्रयः ॥
तीर्थाल्हादी तीर्थप्रदो भ्रामको भ्रमणो भ्रमी ।
श्रीवासपण्डितानन्दो रामानन्दप्रियङ्करः ॥
गदाधरप्रियो दासविक्रमी शङ्करप्रियः ।
योगी योगप्रदो योगो योगकारी त्रियोगकृत् ॥
सर्व्वः सर्व्वस्वदो भूम्नः सर्वाङ्गः सर्व्वसम्भवः ।
वाणि वीणायुधो वादी वाचस्पतिरयोनिजः ॥
बुद्धिः सत्वं वलं तेजो धृतिमान् जङ्गमाकृतिः ।

मुरारि र्व्वर्द्धनो धाता नृहरि र्मानवर्द्धनः ॥
निष्कर्म्मा कर्म्मदो नाथः कर्म्मज्ञः कर्म्मनाशकः ।
अनर्हः कारकः कर्म्म क्रियार्हः कर्म्मबाधकः ॥
निर्गुणो गुणवानीशो विधाता सामगोऽजितः ।
जितश्वासो जितग्रामो जितानङ्गो जितेन्द्रियः ॥
कृष्णभावी कृष्णनामी कृष्णात्मा कृष्णनायकः ।
अद्वैतो द्वैतराहित्यो द्विभावः पालको वशी ॥
श्रीवासः श्रीधराहव्यो हलनायकसारवित् ।
विश्वरूपानुजश्चन्द्रो वरीयान् माधवोऽच्युतः ॥
रूपासक्तः सदाचारो गुणज्ञो वहुभावकः ।
गुणहीनो गुणातीतो गुणग्राही गुणार्णवः ॥
ब्रह्मानन्दो नित्यानन्दः प्रेमानन्दोऽतिनन्दकः ।
निन्द्यहारी निन्द्यवर्ज्जी निन्द्यघ्नः परितोषकः ॥
यज्ञवाहु र्विनीतात्मा नामयज्ञप्रचारकः ।
कलिवर्य्यः सुचीनांशुः पर्य्यांशुः पावकोऽपमः ॥
हिरण्यगर्भः सूत्रात्मा वैराज्यो विरजापतिः ।
विलासी प्रभावी स्वांशी परावस्थः शिरोमणिः ॥
मायाघ्नो मायिको मायी मायावादी विचक्षणः ।
कृष्णाच्छादी कृष्णजल्पी विषयघ्नो निराकृतिः ॥
संकल्पशून्यो मायीशो मायाद्वेषी व्रजप्रियः ।
व्रजाधीशो व्रजपति र्गोपगोकुलनन्दनः ॥
व्रजवासी व्रजभावो व्रजनायक-सत्तमः ।
गुप्तप्रियो गुप्तभावो वाञ्छितः सत्कुलाश्रयः ॥
रागानुगो रागसिन्धु रागात्मा रागवर्द्धनः ।
रागोद्गतः प्रेमसाक्षी भट्टनाथः सनातनः ॥
गोपालभट्टगः प्रीतो लोकनाथः प्रियः पटुः ।

द्विभुजः षड्भुजो रूपी राजदर्पविनाशनः ॥
काशीमिश्रप्रियो वन्द्यो वन्दनीयः शचीप्रसूः ।
मिश्रपुरन्दराधीशो रघुनाथप्रियोऽरयः ॥
सार्व्वभौमदर्पहारी अमोघारिः वसुप्रियः ।
सहजः सहजाधीशः शाश्वतः प्रणयातुरः ॥
किलकिञ्चितभावार्त्तः पाण्डुगण्डः सुचातुरः ।
प्रलापी वहुवाक् शुद्धः ऋजु र्वक्रगतिः शिवः ॥
घट्टायितोऽरविन्दाक्षः प्रेमवैचित्त्यलक्षकः ।
प्रियाभिमानी चतुरः प्रियावर्त्ती प्रियोन्मुखः ॥
लोमाञ्चितः कम्पधरः अश्रुमुखो विशोकहा ।
हास्यप्रियो हास्यकारी हास्ययुक् हास्यनागरः ॥
हास्यग्रामी हास्यकरस्त्रिभंगी नर्त्तनाकुलः ।
ऊद्ध्र्वलोमा ऊद्ध्र्वहस्तः ऊद्ध्र्वरावी विकारवान् ॥
भावोल्लासी धीरशान्तो धीराङ्गो धीरनायकः ।
देवास्पदो देवधामा देवदेवो मनोभवः ॥
हेमाद्रि र्हैमलावण्यः सुमेरु र्ब्रह्मसादनः ।
ऐरावतस्वर्णकान्तिः शरघ्नो वाञ्छितप्रदः ॥
करभोरूः सुदीर्घाक्षः कम्पभ्रूचक्षुनासिकः ।
नामग्रन्थी नामसंख्याभाववद्धस्तृषाहरः ॥
पापाकर्षी पापहारी पापघ्नः पापशोधकः ।
दर्पहा धनदोऽरिघ्नो मानहा रिपुहा मधुः ॥
रूपहा वेशहा दिव्यो दीनवन्धुः कृपामयः ।
सुधाक्षरः सुधास्वादी सुधामा कमनीयकः ॥
निर्म्मुक्तो मुक्तिदो मुक्तो मुक्ताख्यो मुक्तिवाधकः ।
निःशङ्को निरहङ्कारो निर्व्वैरो विपदापहः ॥

विदग्धो नवलावण्यो नवद्वीपद्विजः प्रभुः ।
निरङ्कुशो देववन्द्यः सुराचार्य्यः सुरारिहा ॥
सुरवर्य्यो निन्द्यहारी वादघ्नः परितोषकः ।
सुप्रकाशो वृहद्बाहु र्मित्रज्ञः कविभूषणः ॥
वरप्रदो वरापाङ्गो वरयुक् वरनायकः ।
पुष्पहासः पद्मगन्धिः पद्मरागः प्रजागरः ॥
ऊर्द्धगः सत्पथाचारी प्राणद ऊर्द्ध गायकः ।
जनप्रियो जनाह्लादो जनाकर्षी जनस्पृहः ॥
अजन्मा जन्मनिलयो जनानन्दो जनार्द्र धीः ।
जगन्नाथो जगद्बन्धुर्जगद्देवो जगत्पतिः ॥
जनकारि र्जनामोदो जनकानन्द साग्रहः ।
कलिप्रियः कलिश्लाघ्यः कलिमान-विवर्द्धनः ॥
कलिवर्य्यः सदानन्दः कलिकृत् कलिधन्यमान् ।
वर्द्धमानः श्रुतिधरः वर्द्धनो वृद्धिदायकः ॥
सम्पदः शरणो दक्षो घृणाङ्गी कलिरक्षकः ।
कलिधन्यः समयज्ञः कलिपुण्यप्रकाशकः ॥
निश्चिन्तो धीरललितो धीरवाक् प्रेयसीप्रियः ।
वामास्पर्शी वामभावो वामरूपो मनोहरः ॥
अतीन्द्रियः सुराध्यक्षो लोकाध्यक्षः कृताकृतः ।
युगादिकृत् युगकरो युगज्ञो युगनायकः ॥
युगावर्त्तो युगासीमः कालवान् कालशक्तिधृक् ।
प्रणयः शाश्वतो हृष्टो विश्वजिद् बुद्धिमोहनः ॥
संध्याता ध्यानकृद् ध्यानी ध्यानमङ्गलसन्धिमान् ।
विश्रुतात्मा हृदि स्थिरग्रामणीय प्रगाहकः ॥
स्वरमूर्च्छी स्वरालापी स्वरमूर्त्ति र्विभूषणः ।
गानग्राही गानलब्धो गायको गानवर्द्धनः ॥

गानमान्यो ह्यप्रमेयः सत्कर्त्ता विश्वधृक् सहः ।
क्षीराब्धिकमठाकारः प्रेमगर्भझषाकृतिः ॥
वीभत्सु र्भविहृदयः अदृश्यो वर्हिदर्शकः ।
ज्ञानरुद्धो धीरबुद्धि रखिलात्मप्रियः सुधीः ॥
अमेयः सर्व्वविद् भानुर्बभ्रूर्बहुशिरो रुचिः ।
उरुश्रवाः महादीर्घो वृषकर्म्मा वृषाकृतिः ॥
श्रुतिस्मृतिधरो वेदः श्रुतिज्ञः श्रुतिबाधकः ।
हृदिस्पृश आस आत्मा श्रुतिसारो विचक्षणः ॥
कलापी निरनुग्राही वैद्यविद्याप्रचारकः ।
मीमांसकारि र्वेदाङ्ग वेदार्थ प्रभवो गतिः ॥
परावरज्ञो दुष्पारो विरहाङ्गी सतांगतिः ।
असंख्येयोऽप्रमेयात्मा सिद्धिदः सिद्धिसाधनः ॥
धर्म्मसेतु र्धर्म्मपरो धर्म्मात्मा धर्म्मभावनः ।
उदीर्णसंशयच्छिन्नो विभूतिः शाश्वतः स्थिरः ॥
शुद्धात्मा शोभनोत्कण्ठोऽनिर्द्देश्यः साधनप्रियः ।
ग्रन्थप्रियो ग्रन्थमयः शास्त्रयोनि र्महाशयः ॥
अवर्णो वर्णनिलयो नाश्रमी चतुराश्रमः ।
अविप्रो विप्रकृत् स्तुत्यो राजन्यो राज्यनाशकः ॥
अवश्यो व्यवसाहीनः श्रीभक्तिव्यवसायकः ।
मनोजवः पूरयिता भक्तिकीर्त्तिरनामयः ॥
निधिवर्ज्जी भक्तिनिधि दु र्ल्लभो दुर्गभावकृत् ।
कर्त्ता नीः कीर्त्तिरतुलः अमृतो मुरजप्रियः ॥
शृङ्गारः पञ्चमो भावो भावयोनिरनन्तरः ।
भक्तिजित् प्रेमभोजी च नवभक्तिप्रचारकः ॥
त्रिगर्त्तस्त्रिगुणामोदस्त्रिवाञ्छी प्रीतिवर्द्धनः ।
नियन्ता श्रमगोऽतीतः पोषणो विगतज्वरः ॥

प्रेमज्वरो विमानार्हः अर्द्धहा स्वप्रनाशनः ।
उत्तारणो नामपुण्यः पापपुण्यविवर्जितः ॥
अपराधहरः पाल्यः स्वस्तिदः स्वस्तिभूषणः ।
पूतात्मा पूतगः पूतः पूतभावो महास्वनः ॥
क्षेत्रज्ञः क्षेत्रविजयी क्षेत्रवासो जगत्प्रसूः ।
भयहा भयदो भास्वान् गौणभावसमन्वितः ॥
मण्डितो मण्डलकरो वैजयन्ती पवित्रकः ।
चित्राङ्गश्चित्रितश्चित्रो भक्तचित्तप्रकाशकः ॥
बुद्धिगो बुद्धिदो बुद्धि बुर्द्धिधृग् बुद्धिवर्द्धनः ।
प्रेमाद्रिधृक् प्रेमवहो रतिवोढ़ा रतिस्पृशः ॥
प्रेमचक्षुः प्रेमगन्धः प्रेमहृत् प्रेमपूरकः ।
गम्भीरगो वहिर्व्वासो भावानुष्ठित गोपतिः ॥
नैकरूपो नैकभावो नैकात्मा नैकरूपधृक् ।
श्लथसन्धिः क्षीणधर्म्मस्त्यक्तपाप ऊरुश्रवाः ॥
ऊरूगाय ऊरुग्रीव ऊरुभाव ऊरुक्रमः ।
निर्धूतो निर्म्मलो भावो निरोहो निरनुग्रहः ॥
निर्धूमोऽग्निः सुप्रतापस्तीव्रतापो हुताशनः ।
एको महद्भूतव्यापी पृथग्भूतः अनेकशः ॥
निर्णायी निरनुज्ञातो दुष्टग्रामनिवर्त्तकः ।
विप्रवन्धुः प्रियो रुच्यो रोचकाङ्गो नराधिपः ॥
लोकाध्यक्षोऽपुवर्णाभः कनकाब्जः शिखामणिः ।
हेमकुम्भः धर्म्मसेतु र्लोकनाथो जगद्गुरुः ॥
लोहिताक्षो नामकर्म्मा भावस्थो हृद्गुहाशयः ।
रसप्राणो रतिज्येष्ठो रसाब्धिरतिराकुलः ॥
भावसिन्धु र्भक्तिमेघो रसवर्षी जनाकुलः ।
पीताब्जो नीलपीताभो रतिभोक्ता रसायनः ॥

अव्यक्तः स्वर्णराजीवो विवर्णी साधुदर्शनः ।
अमृत्युः मृत्युदोऽरुद्धः सन्धाता मृत्युवञ्चकः ॥
प्रेमोन्मत्तः कीर्त्तनार्त्तः संकीर्त्तनपिता सुरः ।
भक्तिग्रामः सुसिद्धार्थः सिद्धिदः सिद्धिसाधनः ॥
प्रेमोदरः प्रेमवाही लोकभर्त्ता दिशांपतिः ।
अन्तःकृष्णो वहिर्गौरो दर्शको रतिविस्तरः ॥
संकल्पसिद्धो वाञ्छात्मा अतुलः सच्छरीरभृत् ।
ऋद्धार्थः करुणापाङ्गो नादकृद् भक्तवत्सलः ॥
अमत्सरः परानन्दः कौपीनी भक्तिपोषकः ।
अकैतवो नाममाली वेगवान् पूर्णलक्षणः ॥
मिताशनो विवर्त्ताक्षो व्यवसायाव्यवस्थितः ।
रतिस्थानो रतिवरः पश्चात्तुष्टः शमाकुलः ॥
क्षोभणो विरभो मार्गो मार्गदृक् वर्त्मदर्शकः ।
नीचाश्रमी नीचमानी विस्तारो वीजमव्ययः ॥
महाकायः सूक्ष्मगति महेज्यो सत्रवर्द्धनः ।
सुमुखः स्वापनोऽनादिः सुकृत् पापविदारणः ॥
श्रीनिवासो गभीरात्मा शृङ्गारकनकादृतः ।
गभीरो गहनो वेधा साङ्गोपाङ्गो वृषप्रियः ॥
उदीर्णरागो वैचित्री श्रीकरः स्तवनार्हकः ।
अश्रुचक्षु र्जलाभ्यङ्गपूरितो रतिपूरकः ॥
स्तोत्रायणः स्तवाध्यक्षः स्तवनीयः स्तवाकुलः ।
ऊद्ध्र्वरेताः सन्निवासः प्रेममूर्त्तिः शतानलः ॥
भक्तवन्धु र्लोकवन्धुः प्रेमवन्धुः शताकुलः ।
सत्यमेद्धा युतिधरः सर्व्वशास्त्रभृताम्वरः ॥
भक्तिद्वारो भक्तिगृहः प्रेमागारो निरोधहा ।
उद्घूर्णो घूर्णितमना आघूर्णितकलेवरः ॥

भावभ्रान्तोऽसन्दोहः प्रेमराशिः शुचापहः ।
कृपाचार्य्यः प्रेमसङ्गो वायुनः स्थिरयौवनः ॥
सिन्धुगः प्रेम उद्गाहः प्रेमवश्यो विचक्षणः ।
पद्मकिञ्जल्कसंकाशः प्रेमाधारो नियामकः ॥
विरक्तो बिगतारातिर्नापेक्षो नादराहृतः ।
नतस्थो दक्षिणः क्षामः शठो जीवप्रतारकः ॥
नामसंवर्त्तकोऽनर्थो धर्म्मगुर्व्वादिपुरुषः ।
न्यग्रोधो जनको जातो वैनर्त्तो भक्तिपादपः ॥
आत्ममोहः प्रेमलीढ़ः आत्तभावानुगो विराट् ।
माधुर्य्यवित् स्वात्मरतो गौराख्यो विप्ररूपधृक् ॥
राधारूपी महाभावी राध्यो राधनतत्परः ।
गोपीनाथात्मकोऽदृश्यः स्वाधिकारप्रसाधकः ॥
नित्यास्पदो नित्यरूपी नित्यभावप्रकाशकः ।
सुस्थभावश्चपलधीः स्वच्छगो भक्तिपोषकः ॥
सर्व्वत्रगस्तीर्थभूतो हृदिस्थः कमलासनः ।
सर्व्वभावानुगाधीशः सर्व्वमङ्गलकारकः ॥
इत्येतत् कथितं नित्यं साहस्रं नामसुन्दरम् ।
गोलोकवासिनो विष्णो गौररूपस्य शार्ङ्गिणः ॥
इदं गौरसहस्राख्यमामयघ्नं शुचापहम् ।
प्रेमभक्तिप्रदं नृणां गोविन्दाकर्षकं परम् ॥
प्रातःकाले च मध्यान्हे सन्ध्यायां मध्यरात्रिके ।
यः पठेत् प्रयतो भक्त्या चैतन्ये लभते रतिम् ॥
नामात्मको गौरदेवो यस्य चेतसि वर्त्तते ।
स सर्व्वं विषयं त्यक्त्वा भावानन्दो भवेद्ध्रुवम् ॥
यस्मै कस्मै न दातव्यं दाने तु भक्तहा भवेत् ।
विनीताय प्रशान्ताय गौरभक्ताय धीमते ॥
तस्मै देयं ततो ग्राह्यं इति वैष्णवशासनम् ॥

इति श्रीकविकर्णपूरविरचितं श्रीकृष्णचैतन्यसहस्रनामस्तोत्रं सम्पूर्णम् ॥

Vrindavan Das
Govind Kund
Vrindavan, Mathura

श्रीमद्रूपगोस्वामिविरचितं

श्रीकृष्णचैतन्यदिव्यसहस्रनामस्तोत्रम्

श्रीकृष्णचैतन्यचन्द्राय नमः।

एकदा रघुनाथेन गत्वा रूपस्य सन्निधौ।
दण्डवत्पतितो भूमौ पृष्टो गद्गदया गिरा ॥१

श्रीरघुनाथदास उवाच–

भो रूप ! शुद्धसत्वस्त्वं प्रेमभक्तिविशारदः।
महाप्रभोः कथं जन्म सन्देहो जायते मम ॥२
कथं नाम सहस्रं च तद्वदस्व महाप्रभोः।
महाप्रभोः प्रियो भक्तः कृष्णलीलाविशारदः ॥३
श्रोतुमिच्छामि भो रूप ! दासं ज्ञात्वा प्रकथ्यताम्।
चैतन्यनाम-साहस्रं दुर्ल्लभं जायते भुवि ॥४

श्रीरूप उवाच–

धन्यो रघुनाथदास कृतवान् प्रश्नमुत्तमम्।
तव सन्देहो नैवास्ति संसारहेतुमिच्छसि ॥५

❀ श्रीमन्महाप्रभुर्जयति ❀

एक समय श्रीरघुनाथदास-गोस्वामी जी श्रीरूप-गोस्वामीजी के निकट गये तथा भूमी में साष्टांगदण्डवत् करके गद्-गद् वाणी के साथ पूछने लगे ॥१॥

हे श्रीयुक्त रूपगोस्वामी चरण ! आप चिन्मय-स्वरूप तथा प्रेमभक्ति के परम पण्डित हैं। किस लिये महाप्रभु का प्राकट्य हुआ ? तथा उनके सहस्रनाम किस प्रकार हैं ? इन बातों को मैं जानना चाहता हूँ। आप कृपा करके मुझे कहिये। क्योंकि आप महाप्रभु के प्रियभक्त तथा कृष्णलीला के परम-पण्डित हैं। हे प्रभो ! श्रीरूप ! किस कारण से श्रीचैतन्य के दुर्ल्लभ सहस्र-नाम पृथिवी में प्रगट हुआ इसे (दास) मुझको अवश्य कहने की कृपा करें ॥२-४॥

वदामि नाम साहस्यं शृणु एकाग्रमानसः ।
चैतन्यजन्महेतुञ्च विस्तरेण वदामि ते ॥६
एकदा राधिकाश्यामौ निकुञ्जे विलसत्कृतौ ।
राधाभावगतः श्यामः राधाप्रेम्णा च विह्वलः ॥७
हे राधे राधिकेऽनन्ते किशोरि प्राणवल्लभे ।
तव नामगुणानन्तान् प्रथयामि कलौ युगे ॥८
राधाप्रेमप्रभावेण कृष्णो गौराङ्गतां गतः ।
यशोदापुत्रः श्रीकृष्णो नवद्वीपे महाप्रभुः ॥६
कलौ संकीर्त्तनार्थाय कृष्णो गौरवपुर्धरः ।
नाम्नां सहस्रं दिव्यानां चैतन्यस्य महाप्रभोः ॥१०

श्रीरूपगोस्वामी कहने लगे। हे रघुनाथदास ! तुमने उत्तम प्रश्न किया। तुम्हें इस विषय में कोई सन्देह नहीं है। परन्तु संसारीजनों के लिये तुम इस प्रकार पूछते हो। महाप्रभु के सहस्र-नाम को कहता हूँ। एक मन होकर सुनो। श्रीचैतन्यप्रभु के जन्म का कारण भी विस्तार से वर्णन करूँगा ॥५-६॥

एक समय श्रीराधिका के साथ श्यामसुन्दर निकुञ्ज में विलास कर रहे थे। उस समय श्रीकृष्ण राधिका प्रेम में विह्वल होकर राधिका-भाव को प्राप्त हुए। आप विह्वल होकर कहने लगे—हे श्री-राधे ! तुम्हारे अनन्त नाम-गुणों को कलिकाल में प्रकाश करना चाहता हूँ। इसकी पूर्त्ति कैसी होगी ? इसका एकमात्र सम्बल आप ही हैं। इस प्रकार विचार करते हुए श्रीकृष्ण राधा प्रेम-प्रभाव से गौरवर्ण अर्थात् गौरांग स्वरूप हो गये। यशोदानन्दन श्रीकृष्ण राधाभाव में विभावित तथा राधाकान्ति से आच्छादित होकर गौरांग स्वरूप में नवद्वीप में प्रकट हुए। उनकी शचीनन्दन तथा महाप्रभु नाम से प्रसिद्धि हुई। कलियुग में संकीर्त्तन धर्म्म का

ओं अस्य श्रीचैतन्यदिव्यसहस्रनामस्तोत्ररत्नस्य श्रीरूपमञ्जरी ऋषिरनुष्टुप् छन्दः विष्णुप्रिया शक्तिः महाप्रभुर्देवता मनोमोहन-काम वीजं बैकुण्ठनाथः कीलकं चैतन्याय नमः इति मन्त्रः श्रीकृष्णचैतन्यप्रसादाय चैतन्यदिव्यनाम सहस्र-पाठमहं करिष्ये इति संकल्पः।

अथ ध्यानम-

सौवर्णवर्णवपुषं नवकञ्जनेत्रं रक्ताम्वरं द्विभुजदण्डकमण्डलुं च।
प्रेमप्रवाहपुलकाङ्गस्वनामध्येयं पीयूषवाक्यभवपावनदिव्यरूपम् ॥११

प्रचार के लिये ही श्रीकृष्ण गौरांग महाप्रभु हुए। अब उन महाप्रभु चैतन्यदेव के दिव्यातिदिव्य सहस्रनाम का कथन करता हूँ, सुनो ॥७-१०॥

ओंकार शब्द प्रारम्भिक मंगलार्थ में है। इस श्रीचैतन्यदेव का दिव्यसहस्रनाम स्तोत्र मन्त्र के ऋषि श्रीरूपमञ्जरी हैं। इस स्तोत्र का छन्द अनुष्टुप् है। विष्णुप्रियादेवी शक्ति, महाप्रभु देवता, मनमोहन काम बीज, वैकुंठनाथ कीलक हैं। "चैतन्याय नमः" यह मन्त्र है। श्रीकृष्णचैतन्यमहाप्रभु के प्रसादार्थ उनके इस सहस्रनाम का पाठ हम करते हैं यह संकल्प है। अब मन्त्र देवता का ध्यान बताते हैं—सुवर्ण की भाँति कांति वाले, नवीन कमल-नयन उन श्रीगौरांगचन्द्र का हम भजन करते हैं। जो निरन्तर प्रेम-सागर में निज कनकमय श्रीअंग को डूवा रहे हैं तथा स्वयं ही अपने नाम का कीर्त्तन-ध्यानादि करते हैं। राधाभाव में विभावित आप कभी हँसते हैं कभी वा हा प्राणवल्लभ! हा श्यामसुन्दर! तुम कहा हो ऐसा कह कर रोदन करते हैं जिससे कि समस्त जगत् रोदन करनेलगता है तथा प्रिय परिकर सब जिनके संग निरन्तर मौजूद रहते हैं॥११

अब सहस्रनाम का प्रारम्भ करते हैं—

श्रीकृष्णः कृष्णचैतन्यः विश्वम्भरो जगद्‌गुरुः ।
जगत्स्वामी जगद्भर्त्ता जगद्बन्धु र्जगन्मयः ॥१२
जगद्धाता विधाता च कारणः करुणामयः ।
कारुण्यः करुणासिन्धु र्दीनबन्धु र्दयानिधिः ॥१३
निधि र्निधानो वरदो दाता नामनिधि र्विभुः ।
परायणः परानन्दः परमः पुरुषः प्रभुः ॥१४
पराप्रेमा पराभक्ति र्भावक्रियाप्रकाशकः ।
अवधूतप्रियो शान्तः नित्यानन्दानुजः कविः ॥१५
शचीपुत्रो जगद्योनिः पराभक्तिर्विदो विदुः ।
भावभक्तिविनोदी च प्रेमभक्तिरसार्णवः ॥१६
पूर्णप्रेम्णि सदामग्नः कलिक्लेशविनाशनः ।
शुद्धसत्वविलासी च प्रपन्नदुःखभञ्जनः ॥१७
अनन्तः शाश्वतः कृष्णः रौद्रो गौरहरिप्र भुः ।
गोविन्दो गोकुलानन्दो गोपालः प्रतिपालकः ॥१८
अखण्डश्चाद्यपुमान् सच्चिदानन्दविग्रहः ।
परमात्मा हृषीकेशः दयालु र्भक्तबान्धवः ॥१९
भक्तप्रियश्चिदानन्दसन्दोहो भक्तवत्सलः ।
भक्तिरतो भक्तिगम्यो भक्ति र्भक्तजनप्रियः ॥२०
भक्तिनन्दी भक्तिदाता भक्तसंगी सदा मुदा ।
भक्तिभावप्रदाता च भक्तजीवनदुर्ल्लभः ॥२१
दुराधर्षो दुरन्ता च दुर्विकारविभञ्जनः ।
अनादिरादि प्रभवः परंज्योतिः परात्परः ॥२२
परापरविनोदी च मनोबुद्धेरगोचरः ।
निर्मायी मायाधीशश्च मायापर अधोक्षजः ॥२३
पुंप्रकृतिगुणानन्तो विश्वव्यापी सनातनः ।
अखिलाधारमात्मा च ज्ञानज्ञेयः गुणार्णवः ॥२४

अनन्तगुणसम्पन्न ईश्वरः कार्य्यकारणः।
करणं कारणः कर्म्मकर्त्ता अव्यक्तः मूर्त्तिवान् ॥२५
अचिन्त्यश्चिन्त्यश्चिद्रूपः सूक्ष्मासूक्ष्मो महाविभुः।
महापवित्रश्च महान् महामूर्त्ति र्महोत्तमः ॥२६
महाकार्य्यो महाकर्त्ता महात्मा च महोदधिः।
महाभावो महाप्रेमा महाकीर्त्तनलालसः ॥२७
महाप्रेमी विरक्तश्च महाविर्भावः भावदः।
महाशुद्धो महाबुद्धो महासिद्धशिरोमणिः ॥२८
महासत्वश्च शान्तश्च महाचिन्त्यः सदा शुचिः।
महानिधि र्निधानञ्च महामङ्गलदायकः ॥२६
महारसो रसानन्दी रसिको रस उत्सवः।
महानुन्मत्तमनसः महामन्त्ररतः सदा ॥३०
महामन्त्रसदाध्यानं महामन्त्रप्रकीर्त्तितः।
महामन्त्रजापकश्च महामन्त्रप्रकाशकः ॥३१
महामन्त्रतत्वयुक्तो महामन्त्रध्वनिः सदा।
महामन्त्रप्रदाता च जगदुद्धारहेतुकः ॥३२
प्रभञ्जनदुःखं चैव दमनः पापध्वंसकः।
कलिकालपरं घोरः महापापपरायनः ॥३३
हरिनामकृतान् लोकानुद्धर्त्ता श्रीमहाप्रभुः।
श्रीकृष्णः श्रीशचीपुत्रः चैतन्यः प्रेमसागरः ॥३४
सिंहग्रीवो महाभुजः नदियादुर्ल्लभोदयः।
गोरचन्द्रः शुद्धसत्वः निजनामप्रकाशकः ॥३५
कृष्णः कृपाकरो विष्णुर्वासुदेवः श्रियःपतिः।
श्रीनिधिः श्रीनिकेतश्च श्रीनिवासः सतांगतिः ॥३६
श्रीधरः श्रीकरः श्रेष्ठः श्रीसेव्यः श्रीमतांवरः।
श्रीशः श्रीराधिकानाथो गोपगोपीमनोहरः ॥३७

श्रीदः श्रीकृष्णचन्द्रश्च नन्दनन्दन ईश्वरः ।
श्रीदेवः यशोदापुत्रः राधेशो राधिकाप्रियः ॥३८
श्रीराधावल्लभः श्रीमान् कृष्णः कमललोचनः ।
श्रीवल्लभः वल्लवीनां प्राणवल्लभरच्युतः ॥३९
श्रीराधिकाप्रियः पतिः मुरारिर्मनोमोहनः ।
गोविन्दो गोकुलानन्दः श्रीहरिः श्रीप्रभुः परः ॥४०
श्रीमोहनो विनोदात्मा राधारमणः सुन्दरः ।
श्रीमुकुन्दः गोपीभर्त्ता गोपीगोपजनप्रियः ॥४१
श्रीकान्तः लक्ष्मीकान्तश्च राधाकान्तश्च माधवः ।
श्रीनाथो राधिकानाथो गोपीनाथश्च मापतिः ॥४२
वृन्दापतिर्व्रजपतिः निजकुञ्जः निजाश्रयः ।
कुञ्जानन्दः व्रजानन्दः वृन्दानन्दः पुरन्दरः ॥४३
कुञ्जप्रियः कुञ्जवासः किशोरो राधिकाधवः ।
राधामनोहरः कृष्णस्त्रिभङ्गः मुरलीधरः ॥४४
किशोरीवल्लभः कृष्णः किशोरीभावसंयुतः ।
कलौ गौरहरिः कृष्णः राधानामप्रकाशकः ॥४५
शिखिपिञ्छलसच्चूडमुकुटो मणिमण्डितः ।
आजानुबाहुः श्यामाङ्गः कर्णकुण्डलशोभितः ॥४६
कम्बुग्रीवः पद्मनेत्रः नासामुक्तामणिप्रभः ।
अधरारुण-बिम्बश्च उच्चहास्यमनोहरः ॥४७
स्वर्णकङ्कणकेयूर-मणिमुक्ताविभूषितः ।
श्रीवत्सवक्षचिन्हस्तु वनमालाबिराजितः ॥४८
पीतवस्त्रपरिधानः कटिसूत्रैरलंकृतः ।
श्रीपाद अरुणाम्भोधिः ध्वजवज्रांकुशाङ्कितः ॥४९
द्विभुजः मोहनमूर्त्तिर्वेणुवादनतत्परः ।
किशोरबयसः कृष्णः किशोरीप्राणवल्लभः ॥५०

श्रीराधा राधिकानन्ता कृष्णाराध्या च कृष्णदा ।
कृष्णप्रिया कृष्णरता कृष्णभाव्या च भावदा ॥५१
श्रीशा श्रीमाधवी कृष्णकृष्णाङ्गी कृष्णभूषणा ।
श्रीकृष्णानन्दिनी नन्दा नन्दनन्दनजीवना ॥५२
श्रीमती किशोरी धन्या किशोरप्राणनायिका ।
व्रजेश्वरी व्रजानन्दा वृन्दावनविनोदिनी ॥५३
निजकुञ्जविलासी च निजकुञ्जरतिप्रदा ।
मोहिनी मधुररूपा कोटिचन्द्रसमप्रभा ॥५४
कुन्देन्दुदन्तरुचिरा नासाग्रगजमौक्तिका ।
सिन्दूरविन्दुका भाले कोटिसूर्य्यसमप्रभा ॥५५
दिव्यवेशा दिव्यहारा दिव्यभूषणभूषिता ।
मुखपद्मं च मधुरा मन्दहास्या सुशोभना ॥५६
मृगाक्षी शरसंघाता भ्रुकुटीकुटिलानना ।
स्तनकुम्भभराक्रान्ता क्षीणकट्या सुशोभना ॥५७
अतीवकोमलपदा चञ्चलश्चरणो युगः ।
नीलपट्टपरिधाना किशोरी कनकप्रभा ॥५८
द्विभुजा पद्महस्ता च पद्मिनीलक्षणान्विता ।
कोटिलक्ष्मीसमकान्तिः कोटिलक्ष्मीसमप्रभा ॥५६
श्रीकृष्णाराधिनी राधा कृष्णाराध्या च राधिका ।
श्रीकृष्णाराधिता राधा राधाभावप्रकाशिता ॥६०
कलौ गौराङ्गः श्रीकृष्णः राधा च श्रीगदाधरः ।
कलौ संकीर्त्तनार्थाय अवतारोऽभवद्भुवौ ॥६१
उभयौ राधिकाकृष्णौ श्रीचैतन्यगदाधरौ ।
गदाधरश्च राधा च पण्डितः श्रीगदाधरः ॥६२
गदाधरप्राणनाथः श्रीचैतन्यः महाप्रभुः ।
गदाधरसहप्रीति गीतवाद्यपरायणः ॥६३

गदाधरनृत्यगीतो महाल्दादः महाप्रभुः ।
भक्तवृन्दसमायुक्तो नृत्यगीत-महोत्सवः ।।६४
गौराङ्गः गोपिकाभर्त्ता राधारूपी गदाधरः ।
गदाधरप्रियः प्रभुः भक्तभावश्च भक्तिदः ।।६५
समस्तभक्तवरदः समस्तभक्तवान्धवः ।
समस्तभक्तपावनः समस्तभक्तजीवनः ।।६६
समस्तभक्तदुर्ल्लभः समस्तभक्तमङ्गलः ।
समस्तभक्तनायकः समस्तभक्तसेवितः ।।६७
समस्तभक्तकारणः समस्तभक्ततारणः ।
समस्तभक्तभक्तिदः समस्तभक्तमोक्षदः ।।६८
समस्तभक्तप्रेमदः समस्तभक्त भावदः ।
समस्तभक्तकीर्त्तिदः समस्तभक्तपूजितः ।।६९
समस्तभक्तज्ञानदः समस्तभक्त-शम्प्रदः ।
समस्तभक्तमोदितः समस्तभक्तवन्दितः ।।७०
समस्तभक्तगम्यतः समस्तभक्तनन्यतः ।
सर्व्वभक्तशिरोमणिः पाषण्डदण्डखण्डनः ।।७१
समस्तदुःखभञ्जनं नमामि पादपङ्कजम् ।
श्रीमहाप्रभोः पटपदो पठेयं पाप नशिनी ।।७२
दयानिधे श्रीनिधे करुणानिधे कृपानिधे ।
नमामि श्रीमहप्रभो देहि मे भक्तिदुर्ल्लभाम् ।।७३
समस्तदुःखभञ्जनं समस्तपापमोचनम् ।
समस्तदासमानसं कृपाकरं कृपामयम् ।।७४
कलौ कल्मषभञ्जनं भवाब्धिदुःखमोचनम् ।
नमामि श्रीपदाम्बुजं भक्तिमुक्तिप्रदायकम ।।७५
वैष्णवधर्म्मस्थापनं वैष्णवधर्म्मपालनम् ।
वैष्णवप्राणनायकं वैष्णवज्ञानदायकम् ।।७६

वैष्णवसर्व्ववन्दितं वैष्णवसर्व्वसेवितम् ।
वैष्णवकामदायकं वैष्णवभक्तिनायकम् ॥७७
वैष्णवकार्य्यकारणं समस्तदुःखभञ्जनम् ।
समस्तपापमोचनं नमामि कञ्जलोचनम् ॥७८
वैष्णवप्राणजीवनं नमामि भक्तरूपिणम् ।
वैष्णवभावदायकं नमामि विश्वनायकम् ॥७९
वैष्णवज्ञानसागरं गुणाकरं सुखाकरम् ।
नमामि भक्तिनागरं गौरहरिं कृपाकरम् ॥८०
नमामि पादपंकजं प्रेमभक्तिशुभावहम् ।
प्रेमभक्तिश्च दुर्ल्लभो दाता च श्री महाप्रभुः ॥८१
जगन्नाथप्रियसुतो द्विजानन्दी द्विजोत्तमः ।
द्विजश्रेष्ठः द्विजप्रियः द्विजपूज्यो द्विजेश्वरः ॥८२
जगन्नाथात्मजः शान्तः पितृभक्तो महामनाः ।
लक्ष्मीकान्तो रमाकान्तः श्रीकान्तश्च शचीसुतः ॥८३
द्विभुजश्च गदापाणिश्चक्री पद्मधरो हरिः ।
निर्म्मलो निरीहो नित्यं निर्व्विकारो निरञ्जनः ॥८४
विश्वरूपमरूपञ्च विश्वकायो विराटह ।
विभूतिर्वरदो मायामानुषो विश्वविग्रहः ॥८५
पाञ्चजन्यधरः शार्ङ्गी वेणुपाणिः सुरोत्तमः ।
अमानी मानदो मान्यः स्वामी परमधार्म्मिकः ॥८६
त्रैलोक्यनाथनाथश्च त्रैलोक्यपावनो महान् ।
महाभूतस्वरूपाय विश्वग्रासाय विक्रमः ॥८७
कालाय कालरूपाय कालदंष्ट्राभयाननः ।
महानुग्राय कालाय कलिकालमलापहः ॥८८
उज्ज्वलवदनाम्भोजः तप्तकाञ्चनदेहभृत् ।
कमलाक्षेश्वरः प्रीतो गोपीलीलाधरो युवा ॥८९

स्वनामगुणभावश्च नामोपदेशकारकः ।
नामचिन्तामणिः कृष्णचैतन्यो रसविग्रहः ॥६०
पूर्णः शुद्धः नित्यमुक्तोऽभिन्नात्मा नामनामिनः ।
नामसंकीर्त्तनहेतु र्निजनामोपदेशकः ॥६१
आचाण्डालप्रियः शुद्धः सर्व्वप्राणिहिते रतः ।
सर्व्वनामप्रदाता च जगदुद्धाररूपधृक् ॥६२
जडचैतन्यरूपश्च जडचैतन्यमोक्षदः ।
कृमिकीटपतङ्गेऽपि आत्मभक्तिप्रकाशितः ॥६३
आत्मप्रियः शुचिः शुद्धः भावदो भगवत्प्रियः ।
महानन्दी महामूर्त्ति र्नारायणः नरोत्तमः ॥६४
अद्वैतो द्वैतरहितः श्रीअद्वैतस्तुतोपि च ।
सीताद्वैतप्रियः प्रभुरद्वैतवचने रतः ॥६५
अवनिमानिनाद्वैतः श्रीचैतन्यमहाप्रभुः ।
आचार्य्य श्रीमहाद्वैतः शान्तिपुरशिरोमणिः ॥६६
नाम्ना श्रीरच्युतानन्दः श्रीअद्वैतसुतप्रभुः ।
भिन्नात्मा भिन्नरूपश्च एक एव द्विरूपकः ॥६७
सीताया जायते पुत्रः जगदात्मा जगन्मयः ।
चैतन्यो सोऽच्युतानन्दः एक एव न संशयः ॥६८
अद्वैतप्राणनाथश्च अद्वैतप्राणदायकः ।
अद्वैतवाक्यमानी च अद्वैतपूजितोऽपि च ॥६९
अद्वैतसङ्गनिरतो राधाभावेन मोहितः ।
राधिकाराधितो नित्यो नित्यानन्दनिमग्नकः ॥१००
नित्यानन्दप्राणवन्धुः नित्यानन्दप्रियेश्वरः ।
नित्यानन्दानुजो गौरः षड्भुजदर्शनः प्रियः ॥१०१
धन्यः श्रीकृष्णचैतन्यचन्द्राग्रजस्वरूपकः ।
नित्यानन्दस्वरूपश्च पितुरावतुलाश्रयः ॥१०२

श्रीनित्यानन्दचन्द्रश्च वसुधाजान्हवीपतिः ।
श्रीवीरभद्रजनको सर्व्वपाषण्डदण्डनः ॥१०३
नित्यानन्दानुजः कृष्णः श्रीचैतन्यमहाप्रभुः ।
गदाधरप्राणनाथः लक्ष्मीविष्णुप्रियापतिः ॥१०४
मुकुन्दसिद्धिदो दीनो वासुदेवामृतप्रदः ।
गुरुभक्तो ब्रह्मचारी निगमागमतत्परः ॥१०५
विद्यानिधिस्त्रिलोकेशो आर्त्तिहा शरणप्रियः ।
वैकुण्ठनाथो लोकेशो भक्ताभिमतरूपधृक् ॥१०६
महायोगेश्वरः सिद्धो महायोगी वरप्रदः ।
ज्ञानभक्तिविदो विद्वान् सर्व्वविद्याविदो विदुः ॥१०७
धर्म्मार्थकाममोक्षाणां दायकः सर्व्वनायकः ।
ज्ञानभक्तिवरप्रदः पीयूषवचने रतः ॥१०८
पीयूषवचनः पृथ्वीपावनः सत्यवाक्यदः ।
गौडदेशजनानन्दः सन्दोहामृतरूपधृक् ॥१०९
गौडानन्दो जनानन्दः ज्ञानानन्दो मनोहरः ।
विष्णुप्रियालक्ष्मीपति गौरचन्द्रः सुधाकरः ॥११०
कलाषोडशसंपूर्णः पूर्णब्रह्म सनातनः ।
चैतन्यः कृष्णचैतन्यः दण्डधृक् न्यस्तदण्डकः ॥१११
अजो जन्मरहितश्च विजितात्मा जितेन्द्रियः ।
सत्कीर्त्तिः संशयच्छिन्नः ज्योतिरूपश्चारूपकः ॥११२
स्वभावनित्यमानन्दः अशोकः शोकवर्ज्जितः ।
अतुलभावमनसः आत्मभक्तिप्रवर्त्तकः ॥११३
अचिन्त्यो लोकबन्धुश्च लोकानन्दः निधिप्रदः ।
इन्द्रादिसर्व्वदेवेषु वन्दितश्रीपदाम्बुजः ॥११४
भगवान् भक्तश्रेष्ठश्च भगवद्धर्म्मवर्च्चसः ।
महानुदारहृदयः उदासीन-जनप्रियः ॥११५

गौराङ्गो वल्लवीकान्तः श्रीकृष्णो व्रजमोहनः ।
अकिञ्चनप्रियो वन्धु र्गुणग्राही गुणार्णवः ॥११६
न्यासीचूडामणिः कृष्णः सन्यासाश्रमपावनः ।
दण्डधृक् न्यस्तदण्डश्च कमण्डलुधरः प्रभुः ॥११७
मुण्डितो मुण्डः कञ्जाक्षः प्रसन्नवदनोज्ज्वलः ।
उज्वलो भावाभावश्च कौपीनकटिशोभितः ॥११८
रक्ताम्वरपरिधानो द्विभुजश्च चतुर्भुजः ।
शंखचक्रगदापद्मधारकः वनमालिकः ॥११९
षड्भुजश्च धनुर्व्वाणः मुरलीदण्डशोभितः ।
पापण्डदमनोदण्डः दुर्व्विकारविभञ्जनः ॥१२०
धूलीधूसरगौराङ्गो राधाभावेन गद्गदः ।
अनन्तगुणसम्पन्नः सर्व्वतीर्थैकपावनः ॥१२१
साक्षात्प्रेमकृपामूर्त्तिः श्रीचैतन्यमहाप्रभुः ।
भक्तश्च प्रेमपुलको मधुरश्चामृतप्रदः ॥१२२
जगन्नाथश्च नाथश्च जगदुद्धारहेतुकः ।
जगन्माता पिता वन्धु र्दाता गोप्ता जगत्प्रियः ॥१२३
अप्रमेयः पद्मनाभः पद्मयोनिः पितामहः ।
विशिष्टः सृष्टिकर्त्ता च सिद्धार्थः सिद्धिदायकः ॥१२४
सर्व्वदर्शी विमुक्तश्च सर्व्वज्ञो सर्व्वदायकः ।
सर्व्वात्मा चिन्सुखश्चैव चित्स्वरूपी जनार्द्दनः ॥१२५
चिदाभासी चिदानन्दी चैतन्यश्चित्प्रकाशकः ।
दयामन्ता कृपाभानुः कृपासिन्धुः कृपामयः ॥१२६
कृपामूर्त्तिः कृपानाथः निजनामप्रवर्त्तकः ।
प्रवर्त्तमप्रवर्त्ता च सर्व्वज्ञः सर्व्वतोमुखः ॥१२७
सुलभः सुन्दरः शुभ्रः सुव्रतः शुभदायकः ।
शुभमूर्त्तिः शुभात्मा च शुभमोक्षप्रदायकः ॥१२८

शुभरूपः शुभानन्दः शुभनामप्रवर्त्तकः।
प्रवर्त्तको निवृत्तात्मा तत्ववेत्ता उदारधीः ॥१२६
तत्वभावो नयानन्दी तत्परस्तत्वदर्शनः।
तत्कथातद्गुणानन्दस्तद्भावस्तत्वमानसः ॥१३०
तन्मूर्त्तिस्तद्गुणे मग्नस्तत्वध्यानं च तन्मयः।
तत्तन्नाम–सदामग्नः तत्तन्नामप्रसादकः ॥१३१
चतुर्म्मूर्त्ति र्व्वपुर्भूत्वा चतुर्व्यूहश्चतुर्भुजः।
चतुर्व्वेदश्चतुर्भावश्चतुर्म्मोक्षप्रदायकः ॥१३२
अमर्त्ति र्विभवः व्यापी मतिदः सर्व्वहृद्गुहशः।
स एव संग्रहसर्व्वः सर्व्वहृत् सर्व्वभावनः ॥१३३
सहस्रमूर्त्तिः प्रभवः सहस्राक्षः शिरोमुखः।
सहस्रवर्णो विश्वात्मा सहस्रभुजपादकः ॥१३४
अकारश्च उकारश्च मकार ऊर्द्ध्वमात्रकः।
परमानन्दरूपश्च श्रीचैतन्यमहाप्रभुः ॥१३५
चैतन्यचन्द्र उदितः निशारूप–कलौ युगे।
नमस्ते श्रीशचीपुत्र कलौ जीवहितप्रदः ॥१३६
दशावतारा अस्यैव चैतन्यो भगवान् स्वयम्।
राधाभावप्रकाशार्थं अवतारो मनोहरः ॥१३७

श्रीचैतन्यचन्द्र कलियुग के अन्धकार नाशार्थ चन्द्रमा रूप से अवतीर्ण हुए। हे शचीनन्दन ! कलिकाल में जीवों के कल्याण दाता आपको नमस्कार ॥१३६

उन चैतन्यचन्द्र में दशावतार मौजूद हैं। आप स्वयं भगवान् समस्त अवतारों के अवतारी हैं। राधाभाव प्रकाश के लिये आपका मनोहर अवतार हुआ है ॥१३७

इतीदं कीर्त्तयेद्भक्त्या चैतन्यनामदुर्ल्लभम् ।
सहस्रनामदिव्यञ्च अशेषेण प्रकाशितम् ॥१३८
यः पठेत् पूजयेद् ग्रन्थमशुभं नश्यति ध्रुवम् ।
पुनर्जन्म नैवाप्नोति कृष्णे भक्तिश्च शाश्वती ॥१३६
पठेद्वा शृणुयान्नित्यं नाम्नां सहस्रमुत्तमम् ।
इह लोके परे वापि भयं सर्व्वं प्रणश्यति ॥१४०
यः पठेत् प्रातरुत्थाय शुभं नामसहस्रकम् ।
सर्व्वपापविनिर्म्मुक्तः जायते नात्र संशयः ॥१४१
चैतन्यनाम-साहस्रञ्च महामन्त्रं महास्तवम् ।
कीर्त्तयेद्यः पठेद्वापि चिन्तयेत् शुद्धमानसः ॥१४२
असाध्यरोगसंयुक्तो मुच्यते रोगसंकटात् ।
सर्वापराधयुक्तोऽपि सोऽपराधात् प्रमुच्यते ॥ (क)

इस दुर्ल्लभ चैतन्यनामसहस्र का मैंने कीर्त्तन किया तथा अशेष रूप से यह दिव्य सहस्रनाम प्रकाशित हुआ ॥१३८

जो इस ग्रन्थ का पठन तथा पूजन करेगा उसका अवश्य अशुभ नष्ट हो जावेगा इस में कोई सन्देह नहीं है । उस व्यक्ति का पुनर्जन्म नहीं होगा तथा वह श्रीकृष्ण में अचला भक्ति को लाभ करेगा ॥१३६

जो नित्य इस को पढ़ेगा सुनेगा उसका इस लोक तथा पर-लोक में समस्त भय नाश हो जायेगा ॥१४०

जो प्रभात में उठ कर इस शुभ नाम सहस्र का पठन करेगा वह समस्त पापों से मुक्त होकर परिकर रूप से जन्म लेगा । इस में कोई सन्देह नहीं है ॥१४१

जो व्यक्ति महामन्त्र स्वरूप इस चैतन्य सहस्रनाम महामन्त्र का कीर्त्तन अथवा पठन किम्वा चिन्तन करेगा वह शुद्धमना असाध्य रोगयुक्त होने पर भी रोग संकट से मुक्त होगा तथा

फाल्गुने पौर्णमास्यां तु चैतन्यजन्मवासरे।
यः पठेत् श्रद्धया युक्तो भक्तिं च लभते ध्रुवम् ॥ (ख)
दातव्यं कृष्णभक्ताय नाभक्ताय कदाचन।
यदि लोभात् प्रदातव्यं स तु पापे प्रलिप्यते ॥ (ग)
शतजन्मसहस्रेषु कृत्वा पापमशेषतः।
चैतन्यनाममात्रेण मुच्यते पातकी महान् ॥१४३
कलौ युगे महाघोरे महापापरतो नरः।
महाप्रभो र्महामूर्त्तिः कलौ पापविभञ्जनः ॥१४४
शृणु रघुनाथदास सत्यं सत्यं वदामि ते।
महाप्रभो र्विना कोऽपि जगदुद्धारकारकः ? ॥१४५

समस्त अपराधों से अपराधी होने पर भी अपराधों से निर्म्मुक्त हो जायेगा ॥१४२ (क)

जो व्यक्ति फाल्गुनी पौणमासी श्रीचैतन्य जन्म दिवस में श्रद्धा युक्त होकर पाठ करेगा वह निश्चय भक्ति लाभ करेगा ॥१४२ (ख)

कृष्णभक्त के लिये इसका कथन उचित है। अभक्त के लिये इसका दान कभी नहीं करना। यदि लोभ में इसका दान किया जाता है तो वह देने वाला पापों से लिप्त हो जावेगा ॥ (ग)

महान् पातकी भी चैतन्य नाम का ग्रहण मात्र से शत-सहस्र जन्मों के अशेष पापों से मुक्त हो जाता है ॥१४३

इस महा घोर कलियुग में मनुष्य प्रायः महा-पाप परायण होते हैं। महाप्रभु की महान्मूर्त्ति ही उन महापापों के नाश में समर्थ है। अर्थात् कलिकाल में महाप्रभु ही पापभञ्जनकारी हैं ॥ १४४

हे रघुनाथदास ! सुनो, मैं सत्य कहता हूँ सत्य कहता हूँ। महाप्रभु के विना जगत् उद्धारकारी कौन हैं ? अर्थात् कोई नहीं है।

स्थापितो वैष्णवो धर्म्मः कृष्णभक्तिः प्रकाशिता ।
एवं दयामयं को वा महाप्रभुं विना भुवि ॥१४६

श्रीरघुनाथदास उवाच-

अनिश्चितः कलौ लोका मूढ़वादाश्च तत्पराः ।
महाप्रभुं न मन्यन्ते दृष्टान्तं कथय प्रभो ! ॥१४७

श्रीरूप उवाच-

शृणु दृष्टान्तं भो दास ! वेदव्यासविकीर्त्तितम् ।
सहस्रनाम दृष्टान्तमेकश्लोकं वदामि ते ॥१४८

श्रीवेदव्यास उवाच-

चतुर्म्मूर्त्तिश्चतुर्व्वाहुश्चतुर्व्यूहश्चतुर्गतिः ।
चतुरात्मा चतुर्भावश्चतुर्व्वेदविदेकपात् ॥१४९
चतुर्व्वाहुश्च श्रीकृष्णः अन्यश्लोके च कीर्त्तितः ।
अस्मिन् श्लोके चतुर्म्मूर्त्तिः श्रीचैतन्यमहाप्रभुः ॥१५०

Vrindavan Das Govind Kund Vrindavan Ma...ra

आपने जगत् में वैष्णव-धर्म्म की स्थापना की। आप ही कृष्ण-भक्ति के प्रकाशक हैं। महाप्रभु के विना ऐसा दयालु और कौन हो सकता है ? अर्थात् कोई नहीं है ॥१४५-१४६

श्रीरघुनाथदास जी कहने लगे-हे प्रभो ! कलिकाल में मनुष्य प्राय मूढ़वाद का ग्रहण करते हैं। उसमें रत होकर निश्चय-मत का ग्रहण में असमर्थ हो जाते हैं। वे सब महाप्रभु को मानने के लिये असमर्थ होते हैं। इसका दृष्टान्त के साथ निर्णय कहिये॥१४७

श्रीरूपगोस्वामी जी ने कहा है—हे रघुनाथदास ! इसका वेदव्यास के द्वारा कहा हुआ एक दृष्टान्त सुनो। सहस्र नाम में एक दृष्टान्त श्लोक को कहता हूँ ॥१४८

वेदव्यास जी का यह वचन है कि-वह महापुरुष चतुर्म्मूर्त्ति-चतुर्व्वाहु-चतुर्व्यूह-चतुर्गति-चतुरात्मा-चतुर्भाव- चतुर्वेदविद्

श्रीचैतन्यो नित्यानन्दः अद्वैतः श्रीगदाधरः।
कलौ जीवहितार्थाय चतुर्म्मूर्त्तिर्वपुर्धरः ॥१५१
गौराङ्गो गोपिकाभर्त्ता नित्यानन्दः हलायुधः।
अद्वैतः ईश्वरः शिवः राधारूपो गदाधरः ॥१५२
महाप्रभुः कृतवतः चतुर्व्यूहश्च संयतः।
पाषण्डमविदुः लोकाः प्रकटः षड्भुजैः कृतः ॥१५३
शङ्ख-चक्र-गदा-पद्मश्चतुर्व्यूहश्चतुर्भुजे।
धर्म्मार्थकाममोक्षं च चत्वारो गतिदायकः ॥१५५
कृतौ-त्रेता-द्वापरान्ते चैकपादः कलौ युगे।
चतुरात्मा हितार्थाय चतुर्भावः प्रकाशितः ॥१५४

विशिष्ट हैं। अर्थात् चार उनकी मूर्ति हैं, चार उनकी भुजा हैं, चार उनके व्यूह हैं, चार उनकी गतियाँ हैं, चार उनकी आत्मा हैं, चार उनके भाव हैं तथा वे चारवेदों के वेत्ता हैं। श्रीकृष्ण चार भुज के हैं इसकी प्रसिद्धि बहुत है। अब श्रीचैतन्य महाप्रभु चार मूर्त्ति विशिष्ट हैं इस श्लोक में कहते हैं ॥१४६-१५०

श्रीचैतन्य, नित्यानन्दप्रभु, श्रीअद्वैतप्रभु, श्रीगदाधरपण्डित-गोस्वामी ये चार मूर्त्ति हैं। कलियुग में जीवों के कल्याणार्थ महाप्रभु ने इन चार विग्रहों का धारण किया है। इन में से गौरांगमहाप्रभु गोपीपति नन्दनन्दन श्रीकृष्ण हैं। नित्यानन्दप्रभु बलदेव स्वरूप हैं। अद्वैतप्रभु सदाशिवजी तथा श्री गदारधजी राधिका स्वरूप हैं। महाप्रभु ने चारव्यूह को प्रकट दिखलाया है। पाषण्डजनों की प्रतीति के लिये आपने षड्भुज को भी धारण किया था ॥१५१-१५३

सत्य-त्रेता-द्वापर के अन्त में कलियुग का प्रवर्त्तन होता है। कलियुग का एक चरण प्रसिद्ध है। उस कलियुग के आप रक्षक

धर्म्मार्थकाममोक्षं च चतुर्व्वर्गगतिप्रदः।
महाप्रभुं विना को वा मोक्षदाता कलौ युगे ॥१५६
ऋग्यजुः सामाथर्व्वश्च चतुर्व्वेदविदः प्रभुः।
पाषण्डदमनार्थाय अवतारो जगद्गुरुः ॥१५७
आत्मा-अनात्मा ज्ञानात्मा विज्ञानात्मा च उच्यते।
विज्ञानमुपास्यवस्तु ज्ञानञ्च समदर्शनः ॥१५८
प्रवृत्तः कामनारम्भः आत्मविघ्ना स्वभावजा।
अनात्मा कुतर्कधर्म्मा देवतागुरुनिन्दकः ॥१५९
पाषण्डमनात्मधर्म्म कलौ लोकेषु वर्त्तते।
ज्ञात्वा श्रीभगवान् कृष्णः अकिञ्चनप्रियः प्रभुः ॥१६०

हैं। धर्म्म-अर्थ-काम-मोक्ष ये चतुर्व्वर्ग हैं। चतुर्व्वर्गगति को देने वाले आप हैं। महाप्रभु के विना कलियुग में मोक्षदाता कौन है? अर्थात् कोई नहीं है। ऋग्, यजु, साम, अथर्व्व इन चारों वेदों के आप ज्ञाता हैं। पाषण्डों का दमन के लिये ही जगद्गुरु आपका अवतार है ॥१५४-१५६

आत्मा-अनात्मा-जीवात्मा-विज्ञानात्मा ये चारि आत्मा हैं। इन चार आत्मा के हितार्थ आपने चार भाव का प्रकाश किया है। उन में से उपास्यवस्तु विज्ञान है। समदर्शन का अर्थ ज्ञान है। प्रवृत्ति धर्म्म में प्राय कामनाओं का संश्लेष रहता है। स्व-भाव करके वे सब आत्मा में विघ्न करने वाले हैं। कुतर्कधर्म्मा-देवता–गुरु निन्दक अनात्मा हैं। कलियुग में प्रायः पाषण्डधर्म्म की प्रवृत्ति रहती है। उसको अनात्म धर्म्म कहते हैं। पुरुष उसमें प्रायः प्रवर्त्तमान होता है। अर्थात् कलिकाल में मनुष्य प्रायः पाषण्डधर्म्म में प्रवर्तमान् होते हैं। वे उत्तम मार्ग में प्रवेश नहीं कर सकते हैं। ऐसा जान कर अकिञ्चन–जनों के प्रिय, प्रभु,

कलौ गौराङ्गः श्रीकृष्णः भक्तानन्दप्रदायकः ।
राधाभावो निजो भावो प्रेम वै पूर्णलक्षणम् ॥१६१
इति चत्वारो भावाश्च प्रकाशितः महाप्रभुः ।
नमस्ते श्रीशचीपुत्र नमस्ते करुणाकर ! ॥१६२
नमस्ते श्रीदयासिन्धो जगन्नाथप्रियात्मज ! ।
विश्वम्भर रमाकान्त गौरचन्द्र नमोऽस्तु ते ॥१६३

इति श्रीरूपगोस्वामी-दासगोस्वामीसंवादे श्रीचैतन्यचरिते विमलज्ञानप्रकाशकं श्रीकृष्णचैतन्यदिव्यसहस्रनाम-स्तोत्रं सम्पूर्णम् । शुभंभूयात् ॥

भगवान् कृष्ण ने इस कलियुग में गौरांग-स्वरूप से अवतार लिया तथा निज राधाभाव से विभावित होकर राधाप्रेम का आस्वादन किया । साथ ही साथ जगत् में पूर्ण लक्षण प्रेम का आस्वादन कराया ॥१५७-१६१

हे शचीनन्दन ! आप को नमस्कार, हे करुणाकर ! आपको नमस्कार, हे दयासागर ! हे जगन्नाथ के प्रिय पुत्र विश्वम्भर ! आपको नमस्कार करता हूँ ॥१६२-१६३

श्रीमन्नरहरिदासमुखोदितं

श्रीश्रीकृष्णचैतन्यचन्द्रसहस्रनामस्तोत्रम्

मङ्गलाचरणम्—

जयति जयति देवः श्रीशचीगर्भजन्मा
जयति जयति भक्तिप्रेमदानैकधर्मा ।
जयति जयति मेरुस्पर्द्धि-गौराङ्गधामा
जयति जयति धन्यः कृष्णचैतन्य-नामा ॥१
नृत्यावेश-महोत्सवातिमधुर-प्रत्यङ्गवेशोज्ज्वलं
श्रीखण्डागुरुकुंकुमादि-सहित-श्रीमद् वृहद्वक्षसा ।
कर्पूरोद्भट-नागवल्लिसुभग-प्रारक्तबिम्बाधरं
श्रीचैतन्यमहाप्रभो र्विजयते लावण्यसारं वपुः॥२
विपुलपुलकहारी चारुकाषायधारी
शिशुरति तरुणो वा नोपलभ्योऽथ सिंहः ।
नयन-सलिलधारा धौत-गौराङ्गयष्टि-
र्जयति मधुरनृत्योल्लासि गौराङ्गचन्द्रः ॥३

[मूलम्]

श्रीनीलाचलयात्रामहोत्सवे दैवसङ्गतो रहसि ।
इति पथि नरहरिदासं द्विजहरिदासः शिशुः प्राह ॥४
श्रीहरिदास उवाच—
पितृ पैश्यामहं वर्त्मानुसरन्निजकर्मणा ।
सुखदुःखात्मके जन्मन्यहं जातो जडो बुधः ॥५
सर्वदोषमयः कालः कलिरेवं प्रचक्षते ।
किम्वा ते वहु वक्तव्यं कलिः सर्वयुगाधमः ॥६
कथमत्र भवेद् क्षेमं केन कृष्णं परं भजेत् ।
विस्मयो मे महानत्र प्रतिभाति च कौतुकम् ॥७

युगेषु त्रिपु शुद्धेषु न कृष्णे जायते मतिः ।
कथं कलौ पापमये मतिः कृष्णे भविष्यति ॥८
पाषण्डमतयः सर्व्वे न सुराः पापहानये ।
कथं कृष्णे भविष्यन्तीत्यहं चिन्ताकुलश्चिरम् ॥९
त्वञ्च हृष्टमना भ्रातः सुखी शान्तश्च दृश्यते ।
जानासि सुखदं किञ्चिद्रहस्यं कथयाशु मे ॥१०
मृतावस्थस्य लोकस्य रक्षणे यत्फलं भवेत् ।
अज्ञस्य कृष्णविज्ञानैस्ततो दशगुणं मतम् ॥११
मृतस्य जन्म नियतं रक्षणे तस्य नाधिकम् ।
कृष्णाज्ञानहतो मूर्खो गत एवाशुभां दशाम् ॥१२
जन्म वा मरणं नैव कारणं सुखदुःखयोः ।
यद्यस्ति स्मरणं विष्णोः सुखं दुःखमतोऽन्यथा ॥१३
पंगुर्मू को जड़ो मूर्खस्तब्धोऽन्धो वधिरोऽलसः ।
कृष्णभक्तिसनाथो यस्तस्य वै जीवनं सुखम् ॥१४
गुणै र्वहुविधैर्यस्तु कृष्णभक्तिं विना नरः ।
आत्मानं मन्यते साधुं मरणं तस्य शोभनम् ॥१५
किमन्यदिह वक्तव्यं त्वं दयालुः स्वभावतः ।
परार्थमेव साधूनां विभूतिर्जीवनं सुखम् ॥१६
श्रीनरहरिरुवाच–
त्वं हि वाह्यार्थदृक् शास्त्रे पुराणादौ तु वैदिके ।
वाह्यार्थदर्शनाद् भीतः शोकसिन्धुं विगाहसे ॥१७
कलिरेष युगो धन्यः कलिरेष शुभावहः ।
यावन्तस्तु कलेर्दोषो स्तूलकानिव पश्य तान् ।
समुच्चार्य्य सकृत् कृष्णमेतान् दाहय सत्वरम् ॥१८
तत्र श्रीमद्भागवतप्रमाणवचनं यथा–
(१ ।३।५१–११।५।३७–३८–३९)

"कले र्दोषनिधे राजन्नस्ति ह्येको महान् गुणः।
कीर्त्तनादेव कृष्णस्य मुक्तबन्धः परं ब्रजेत् ॥१६
कलिं सभाजयन्त्यार्या गुणज्ञाः सारभागिनः।
यत्र संकीर्त्तनेनैव सर्व्वः स्वार्थोऽपि लभ्यते ॥२०
कृतादिषु प्रजा राजन् कलाविच्छन्ति सम्भवम्।
कलौ किल भविष्यन्ति नारायणपरायणाः ॥
क्वचित् क्वचिन्महाराज ! द्राविड़ेषु च भूरिशः" ॥२१
सञ्चिन्त्यात्र महत्पुण्यमक्षय्यममलं शुभम्।
प्राशस्त्येनोक्तमृषिभिः केवलं नामकीर्त्तनम् ॥२२
"हरेर्नाम हरेर्नाम हरेर्नामैव केवलम्।
कलौ नास्त्येव नास्त्येव नास्त्येव गतिरन्यथा" ॥२३
एष सर्व्वपुराणस्य सारः शास्त्रविचारतः।
दान-व्रतादिकमपि पूर्णं स्यान्नामकीर्त्तनात् ॥२४
पाषण्डा अपि शुद्ध्यन्ति कृष्णनामानुकीर्त्तनात्।
शोधयन्त्य परांश्चैव तांस्तान् वेदान्तपारगान् ॥२५

श्रीहरिदास उवाच–

सत्य-त्रेता-द्वापरेभ्यः कलिः साधुस्त्वयोच्यते।
किमिदं चित्रमिव मे प्रतिभाति तदुच्यताम् ॥२६
ध्यानं यज्ञश्च पूजा च तत्रासीत्तदपि स्फुटम्।
न प्राप्तवान् कोऽपि कृष्णं नारदादीन् मुनीन् बिना ॥२७
कलौ कथं सकृत् कृष्णमुक्त्वैवाशु शुभं व्रजेत्।
सर्व्वमेतत् कथय मे शृण्वतो नास्ति मे क्षमः ॥२८

श्रीनरहरिरुवाच–

एतत् किं भवतो नैव संजातं कर्णगोचरः।
योऽसौ सर्वावताराणां सारभूतः कृपाबलात् ॥२६

अवतीर्णः कलौ देवः प्रेमभक्तिमहास्त्रभृत् ।
यस्य कीर्त्त्या जगत् सर्ब्बमाब्रह्म स्तब्धमावृतम् ॥३०
पूताश्च प्राभवन् सर्वे स्त्री-वाल-जड़-मद्यपाः ।
चण्डाला यवना मूर्खा विषयान्धाः कुयोगिनः ॥३१
योगिनो ज्ञानिनो ब्रह्मचारिणस्त्यागशालिनः ।
अध्यात्मवादिनः सर्वे किमन्यदपरं ब्रुवे ॥३२
इतिहासो मया वाच्यः श्रूयतामतिमङ्गलम् ।
नीलाचलं गते तस्मिन् मया तत्र गतं पुरा ॥३३
धन्यं श्रीतपनाचार्य्यं पुरस्तात् पश्यतो मम ।
यथा सहस्रनामान्ते प्रसादोऽभूदतः परम् ॥
तथा तं कथयिष्यामि रहस्यमतिदुर्ल्लभम् ॥३४
पुराहं जड़धीः पापरतः कृष्णविडम्बितः ।
वैशाखस्य चतुर्द्दश्यां न्यासिनं निशि दृष्टवान् ।
स्वप्नसन्दर्शनादेव तस्मिन् जाता रतिर्मम ॥३५
प्रादुर्भावं निशम्याथ तस्य दृष्टिपथं गतः ।
किमाश्चर्य्यं वदिष्यामि दर्शनाद् यदभूद्सुखम् ॥३६
तत्रैव कृष्णबुद्धिर्मे जाता तच्च विनानघम् ।
न कुत्रापि मति र्भाति वद्धेव गुणरज्जुभिः ॥३७
तदारभ्य मनस्तस्य रूपं नैव जहाति मे ।
आकृष्टमिव तेनासीदयस्कान्तेन लौहवत् ॥३८
यत्र कुत्रापि गच्छन्तंमनः सहजचञ्चलम् ।
निवारयन्ति प्रभवस्तद्गुणग्रामवान्धवाः ॥३९
दृष्टा क्वचित् सकृदुदारदृशा क्षणार्द्ध-
मुत्तुङ्गतप्तकनकच्छवि-देहयष्टिः ।
नेत्रं मनः स्मृतिमपोहति हन्त नैवं
साद्यापि मे न हृदयादपयाति जातु ॥४०

तमेव कथयिष्यामीत्युक्त्वाकृष्णमना रसैः ।
क्षणात् स्थैर्य्यमुपालभ्य तूष्णीमासीन्नताननः ॥४१
पुनः प्रोवाच भो विप्र ! लोके महति युज्यते ।
नैव संगोपनार्हस्य कथनं तस्य विस्तरात् ॥४२
यत्प्रसादादहमपि प्राप्तवानीदृशीं दशाम् ।
सर्वपाप-महावन्हि निर्भस्मितकलेबरः ॥४३
वक्तुं वार्हति कस्तस्य गुणान् गुणवहिष्कृतान् ।
कर्णे ते कथयिष्यामीत्युक्त्वा साधु तथा करोत् ॥४४
एतच्छ्रुत्वा सपुलको हरिदासोऽतिहर्षतः ।
अश्रुधाराकुलः पूर्णहृदयः कण्ठगद्गदः ॥४५
नात्मानं संवृणोति स्म सकम्पोऽतीवविह्वलः ।
किमुक्तं कृष्णचैतन्य इतीत्याह पुन पुनः ॥४६

श्रीहरिदास उवाच-

तमेव मे कृपां कर्त्तुं कुत आगतवानसि ? ।
किं ते कृतं मया पूर्वं येन त्वं जात ईदृशः ॥४७
इदं कर्णामृतं प्राह मदभिप्राय सम्मतम् ।
मया कलियुगस्यैवं रहस्यं चिन्त्यते चिरम् ॥४८
अत्रावतारो भावीति कथं न श्रूयते पुनः ।
सर्वशास्त्रे भागवते व्याख्यातोऽस्ति स चानघः ॥४९
दृष्टः श्रुतश्च किं नाभून्मम कर्मवशादिति ।
चिन्तयेत्थमतिव्यग्रः क्व यामि क्व स्थितिं लभे ॥५०
किं करोमि भवेत् किं मे को मे त्रातेति नोत्सहे ।
तत्र त्वयेदृशं प्रोक्तं पुनः कथय विस्तारात् ॥५१
यद्येष लोकनिस्तारकारणाय प्रभुः स्वयम् ।
प्रादुर्भूतस्तर्हि कथं लोकेभ्यो भीतिरीदृशी ॥५२

लोका स्मरन्तु दुर्गानि तत्पादाब्जं भजन्तु च ।
नात्र माया त्वया कार्य्या मामवेक्ष्य सुपापिनम् ॥५३
यन्नामोच्चारणादेव भवव्याधिः प्रलीयते ।
तद्यशः कथने भीतिरिति चित्रं महत्सखे ॥५४
भयानि यस्य नामेभ्यः पलायन्ते महान्त्यपि ।
स्वयं स एवावतीर्णोऽप्यत्रैवायमसाध्वसम् ॥५५
एवं संसारभीतं मां किं पातयसि संकटे ।
प्रभावज्ञोऽपि तस्य त्वमुद्भावयसि यद्भयम् ॥५६
भवव्यालादहं भीतः शरणं त्वामुपाश्रितः ।
मिथ्याभीतिं समुद्भाव्य चित्तं दुःखयसीव मे ॥५७
पादाम्बुजं समाश्रित्य दत्तः त्रिभुवनाभयम् ।
विभेतव्यं यदि तदा कं गत्वा निर्वृतो जनः ॥५८
कृष्णभक्तः सदा भ्रात निरपेक्षो भवेदिति ।
श्रुतं सर्वेषु शास्त्रेषु लोकापेक्षा कथं तव ॥५९
दान-व्रत-तपो-होम-धर्म्मादिकमपि स्फुटम् ।
नाद्रियन्ते महात्मनः का भीतिस्तव लौकिकी ॥६०
निरपेक्षो हि भक्तस्त्वं कृष्णस्ते जीवनं धनम् ।
लौकिकीं भीतिमुद्भाव्य किं मोहयसि मां सखे ! ॥६१
न कुत्रापि यदत्यपेक्षा धर्म्मादिभ्यो न चेद्भयम् ।
यदत्येकः कृष्णविश्वासः सुखं तर्हि निरर्गलम् ॥६२
का प्रीतिः कृष्णभजने यदत्यपेक्षोत्थिता क्वचित् ।
संकोच एव दावाग्निः कृष्णभक्तस्य दाहकः ॥६३
न ज्ञानं न च वैराग्यं नैन्द्रं ब्राह्मञ्च वैभवम् ।
यत्रापेक्षास्पदं न स्यात्तत्र भीति र्हि लौकिकी ॥६४
महापातकयुक्तो वा सर्वधर्म्ममयोऽपि च ।
कृष्णस्यैव वलं धत्ते सर्वथा निर्वृतो हि सः ॥६५

तत्पादसंश्रया एव सिद्धयः सुखदा अपि।
कृष्णभक्तिः परास्यैव यत्राध्यात्मकथा अपि॥
औपतापाय जायन्ते यथा वज्रादिपातना: ॥६६
स कृष्णभक्ते र्महिमा तत्सुखं स महोदयः।
अपेक्षा कर्मणां यत्र स्वभावाज्जातु नोत्थिता ॥६७
निःशंको निरपेक्षो यः स्वान्तं यस्य निरर्गलम्।
प्रेमानुराग-सम्पृक्तः स भक्तिसुखमश्नुते ॥६८
भस्मपांशुसमं कृत्वा पाप-पुण्यं यदा जनः।
कृष्णस्यैव बलं धत्ते तदा भक्तिसुखोर्जितः ॥६९
इदमतिसुखदं वचो निशम्य स्वहृदयगुम्फितमुत्सवार्द्र चेताः।
स्खलितः गुरुधृतिः पपात भूमौ हर्षिततनुः पुनरप्यवाप धर्मम् ॥७०
न तव हृदयमीदृगित्यवैमि स्फुटमधुना मम जीवनं त्वमेव।
इतिवचनमुदीर्य्य भग्नधैर्य्यः शिरसि चुचुम्ब मुहुस्तमालिलिङ्ग॥७१
किमिदमति गभीरं चित्तवृत्तं विचित्रं
सुखयति मम चित्तं विस्मयं चातनोति।
इति वचनमुदीर्य्य पौढ़रोमप्रहर्ष-
श्चिबुकमतुलहर्षान् पाणिनात्तं चुचुम्ब ॥७२

श्रीनरहरिरुवाच–

अपि परिणत-साधुभाववक्त्रादिह न मया कलितं वचः कदापि।
तव मुखगलितं पुनर्यथेदं श्रुतिमधुना व्यतनोत्सुधारसार्द्राम् ॥७३
साधूक्तं भवता नात्र विपरीतं वदाम्यहम्।
वक्तुं नैवातिसंगोप्यं युज्यतेऽनधिकारिषु ॥७४
कलय हृदि सुखं सतां प्रसंगे भवति तथानधिकारिणां न संगे।
इयमतिसुखदा हरेः कथापि प्रतिजनदर्शनतोऽपि दुःखदैव ॥७५
ततस्तां कथयामास कथां पुण्यां रसोज्ज्वलाम्।
भवान्धा अपि तच्छ्रुत्वा चक्षुष्मन्तो भवन्त्विति ॥७६

श्रीनरहरिरुवाच–

गौड़देशे नवद्वीपो गङ्गातीरे सुखास्पदम्।
ब्राह्मणानां क्षत्रियाणां वैश्याणां शूद्रजन्मनाम्॥७७
अम्बष्टाणां मिश्रितानां तथा संगीतशीलिनाम।
कवीणां पण्डिताणाञ्च धनिनां धर्म्मशालिनाम्॥७८
साधूणां त्यागिनां यत्र सर्वेषामेव संहितः।
सेयं नवद्वीपपुरी द्वितीयेवामरावती॥७९
भूदेवः श्रीजगन्नाथमिश्रस्तत्र पुरन्दरः।
शुद्धसत्त्वात्मनस्तस्य गृहे शुद्धकुलोज्ज्वले।
शचीगर्भे प्रादुरभूच्छ्रीचैतन्यो महाप्रभुः॥८०
चैतन्यः कृष्णचैतन्यो बिश्वम्भर इति त्रयम्।
नाम तस्याभवत् पूर्वं ततश्चान्यान्यपि क्रमात्॥८१
अभवन् गुणकर्मभ्यां तेषां संख्या न विद्यते।
तदीया एव जानन्ति कदाचिद्भक्तिवैभवात्॥८२
यथा यथा तस्य तनुर्दिने दिने तथैव कर्माणि गुणा अपि क्रमात्।
रूपाणि च प्रेमकला च वर्द्धते तथैव भक्तिस्वंगुणामृतेः सह॥८३
गुणकर्मविहारैः स्वैः प्रेम विस्तारयन् भुवि।
सदा ताण्डव-लीलाभिश्चिक्रीड जनयन्मुदाम्॥८४
माल्यचन्दनगन्धैश्च कुंकुमै र्बहुभूषणैः।
निजसौन्दर्य्यभूषोऽपि स देहं स्वमभूषयत्॥८५
कचिदम्वर-भूषाभिः कचिल्लावण्यविभ्रमैः।
कचिच्चन्दनपङ्कैश्च कचिन्नानापरिच्छदैः॥८६
कचित्ताम्बूलविभवैः कचित् सर्वांगभूषणैः।
केशाकल्पैः कचित् कापि कर्णाहितसुपल्लवैः॥८७
कचित् कर्णारक्तपुष्पैः करलीलाम्वुजैः कचित्।
कचिदुद्दामखेलाभिः सव्याजाकलनैः कचित्॥८८

हासैः क्वचित् परीहासै र्मधुरालापनैः क्वचित् ।
आत्मानं भूषयन्नेतै र्भूषयामास चापरान् ॥८६
तस्य भूषां वर्णयितुं को वा शक्तोऽस्ति पण्डितः ।
नगरी यस्य भूषाभि र्भूषिता किल दृश्यते ॥६०
अङ्गदोलनविन्यासैः क्वचिद्वाल्यविचेष्टितैः ।
क्वचिद्‌गजेन्द्रगमनैः सव्याजकलहैः क्वचित् ॥६१
ताण्डवै र्वेणुवाद्यैश्च गीतैर्वाद्यैश्च कुत्रचित् ।
कदाचिद्वान्धवालापैः कदाचित् सुखभोजनैः ॥६२
क्वचिद्विद्याविनोदैश्च क्वचिन्मल्ल-परिश्रमैः ।
चिक्रीड विभ्रमैरेतैः क्रीडयामास चापरान् ॥६३
तस्य वर्णयितुं क्रीडां कस्यास्ति वहुवक्तृता ।
यच्छिक्षयाऽभवन् सर्व्वे जनाः क्रीडापरायणाः ॥६४
शतशो गायकास्तस्य कृष्णकीर्त्तनलम्पटाः ।
अभवन् मिलितास्तत्र नवद्वीपे तदाश्रिताः ॥६५
श्रीश्रीनिवास–हरिदास–मुकुन्ददत्त-
श्रीवासपण्डित–गदाधर–राघवाद्याः ।
गोविन्द-राम–कविचन्द्र–सदाशिवाद्या–
स्तं तोषयन्ति गुणकीर्त्तनमङ्गलैश्च ॥६६
अन्ये त्वपूर्वरसगान–विदग्धभावाः
सङ्गीतशास्त्रकुशलाः सुहृदस्तथान्ये ।
श्रीवासुदेव-हरिशर्म–मुरारिमुख्याः
सङ्गे भ्रमन्ति रजनीदिवसं सुखाप्त्या ॥६७
नृत्यैर्विद्याधरं केचिद् गानैः केचन किन्नरान् ।
गन्धर्व्वं प्रहसन्त्यन्ये वैदग्धीभि र्जितामराः ॥६८
यथा हरिर्नृत्यति देवदेवस्तथैव ते रूपविलासवन्तः ।
नृत्यन्ति गायन्ति हसन्ति मत्ता जानन्ति रात्रिं न दिनं दिशो वा ॥६६

रूपवन्तो विदग्धास्ते सुकण्ठाः शक्तिशालिनः ।
नर्त्तयन्तीन्द्रमिव तं वेशवन्तः सुरा इवः ॥१००
तञ्चाकलयितुं तत्र के वा न मिलिता जनाः ।
रूपवन्तो वेशवन्तः सुश्रीका गुणशालिनः ॥१०१
पण्डिता धनिनो मत्ता विषयात्माश्च मानिनः ।
द्रष्टुं न के समायाताः के वा नापुः शुभां दशाम् ॥१०२
दृष्ट्वा तान् मिलितांस्तत्र नानारूपधरानहो ।
वयं किञ्चिन्नैव विद्मः कुतः के मिलिता इति ॥१०३
चमत्कारो महानासीत् केवलं क इमे जनाः ।
आयान्ति यान्ति च कुतः किमेते स्वर्गवासिनः ॥१०४

रात्रिन्दिवं गणमशेषमशेषगान-
शूरं सुशब्दकरताल-मृदङ्गविज्ञम् ।
स्रक्चन्दनाद्यमलमण्डन मण्डिताङ्ग-
मादाय ताण्डवगुरुः कुरुते विनोदम् ॥१०५

किमुच्यते गुणास्तस्य कोटिब्रह्माण्डपूरकाः ।
अशेषलीलासहिता मूढ़ेन जिह्वयैकया ॥१०६
ब्रह्मापि तद्गुणान् वक्तुं न शक्तश्चतुराननः ।
तद्गुणान् वर्णयन्तीमे रसना किं न लज्जते ॥१०७
मूका वदन्ति गायन्ति पंगुर्नृत्यति धावति ।
यस्य प्रभावादेवं स्याद्गुणान् कस्तस्य वर्णयेत् ॥१०८
अवाक् शिशुर्गिरं धत्ते प्रेम्णा नृत्यन्ति च स्त्रियः ।
यस्य प्रभावादेवं स्याद्गुणान् कस्तस्य वर्णयेत् ॥१०९
गृहातुराश्च पाषण्डाः कीर्त्तनैराप्नुवन् हरिम् ।
यस्य प्रभावादेवं स्याद्गुणान् कस्तस्य वर्णयेत् ॥११०
यस्य प्रभावान्मुनयो न्यासिनो ब्रह्मवादिनः ।
प्रेमभक्ति समारूढ़ा गुणान् कस्तस्य वर्णयेत् ॥१११

तथापि संक्षिप्य गुणांस्तदीयानवश्यवक्तव्यतया ब्रवीमि ।
आत्मानमेवास्य वदामि चैवं गुणोर्ज्जितं निर्भरहर्षतर्षात्॥११२
क्रमेण नानादिशि ताण्डवानि गीतानि वाद्यानि कथाप्रबन्धान् ।
विस्तार्य्य तेनाद्भुतचारुकीर्त्त्या नियोजिताः स्वे पथि सर्व एव॥११३
एवं ताण्डव-लावण्यैस्तस्य लोक-सुपूजितैः ।
प्रेमभक्तिपराः प्रायाः सर्व एवाभवन् जनाः ॥११४
ततोऽस्य सर्वाद्भुत शक्तिशालिनः
क्रियाभिरानीचमधमपण्डिताः ।
स्त्रियश्च शूद्राः समकीर्त्तयन् हरिं
स कौतुकी गन्तुमियेष दक्षिणम् ॥११५
आचार्य्ये श्रीमदद्वैते शंकराश्चर्य्यविक्रमे ।
विलासशक्तिमावेश्य ययौ नीलाचलं प्रति ॥११६
भो ! श्रीमदद्वैत ! गृहाण भारं बलेन सार्द्धं परिपालय त्वम् ।
गौड़ावनीमोड्रमहं व्रजामि नीलाचले यत्र बसामि नित्यम्॥११७
भोक्ष्येऽहं विविधात् भोगान् गूढ़ः केनाप्यलक्षितः ।
वहिरुच्छिष्टभोजी स्यां लोकरक्षणकारणात् ॥११८
मच्छिक्षया नरः सर्वोऽत्रान्नव्यञ्जनभोजकः ।
महाप्रसादविश्वासेनात्मानं भावयन् हरेः ॥११९
मम नाम मुखे गृह्णन्नुच्छिष्टमुदरेऽर्पयन् ।
मद्भक्तिमचलां लब्ध्वा मामेवाप्नोति मज्जनः ॥११०
पुरोऽस्म्यहं मुदा लीलाविनोदी तव सर्व्वदा ।
कीर्त्तनानि ग्राहय त्वं तत्राहं स्यां सुखी यथा ॥१२१
इत्युक्त्वा रचयन् मायां सर्वलोकविमोहिनीम् ।
कृत्वा वेशान्तरं श्रीमल्लीलाचलमगादयम् ॥१२२
श्रीनीलाचलचन्द्रस्य देहं तेजोभिराश्रयत् ।
वहिश्च काशीमिश्रस्य वाट्यां साधुस्थितो बिभुः ॥१२३

इत्थं द्विधाकृततनुः सकलावतारः
लीलाविनोद-निजशक्तिसहस्रधारी ।
स्वेच्छामयः परमकारुणिकः स आस्ते
लोकान् श्वपाक-यवनानपि संग्रहीतुम् ॥१२४

तदारभ्याभवन् सर्वे नीलाचलपरायणाः ।
नीलाचलपतिः कस्मिन् दयादृष्टिञ्च नाकरोत् ॥१२५
एकदा निभृतं तत्र काशीमिश्रमुवाच सः ।
श्रीनीलाचलचन्द्रस्य विभूती वर्द्धयं स्वयम् ॥१२६
लोका भवन्तु सुखिनः श्रीनीलाचलसम्पदा ।
महाप्रसादा लोकेभ्यो दीयन्तां प्रीतये मम ॥१२७
कीर्त्तनार्थं निजानत्र गायकान् कुरु सत्वरम् ।
जगन्नाथस्य पुरतो नाम्नां संकीर्त्तनं यथा ॥१२८
गुणकर्मानुसम्बन्धा गानगाथास्तथा प्रभोः ।
गायन्तु लोकशिक्षार्थं लोका गृन्हन्ति ता यथा ॥१२९
एतत्ते सर्बमाख्यातं श्रीचैतन्यमहाप्रभोः ।
रहस्यमतिसंगोप्यं किमन्यदपरं ब्रुवे ॥१३०

इति सुमधुरमाकलय्य वाक्यं
प्रमदरसोज्ज्वलकोमलाङ्गयष्टिः ।
पटुतरमपि संननर्त्त मत्तो
गलितधृतिर्गलितोरुनेत्रवारिः ॥१३१

कदा तच्चरणाम्भोजमालोकनपथं व्रजेत् ।
इति चिन्ताकुलः प्राह हरिदासः सगद्गदम् ॥१३२

श्रीहरिदास उवाच-

कदा मे तद्दिनं भावि कदा मे सफला जनिः ।
कदा मे नयनं श्लाघ्यं कदा प्रेक्षे पदं विभोः ॥१३३

श्रुत्वैतद्‌वचनं रम्यं कृतकृत्योऽस्मि ते सखे !
सहस्रनाम यत्प्रोक्तं तत्सर्वं कथयाशु मे ॥१३४

श्रीनरहरिरुवाच–

इत्थं विहारकलया सततं विनोदी
सन्न्यासिवेशवलितश्चलितः कदापि ।
प्रेमप्रकाशमधुरस्तपनेन दृष्टः
श्रीश्रीशचीतनय एष किशोरमूर्त्तिः ॥१३५
दृष्ट्वैव विस्मितमना निरवद्य रूपं
चित्ते चकार किमपि क्षणमाप्ततूष्णीम् ।
पश्चादयं किमपि चित्रमुवाच हन्त !
स्वान्ते मम स्फुरति कोऽपि मनोजमूर्त्तिः ॥१३६
पश्यामि केवलममूं यतिशान्तमूर्त्तिं
चित्ते पुनः स्फुरति नागरनागरेशः ।
कस्मै वदामि किमिवास्ति निगूढमत्र
चेतः प्रमोदजलधिं त्ववगाहते किम् ॥१३७
शतशत-नागलीलः शतशतदेहच्छविः स्फुरति ।
शतधा दृष्टिमिवायं स्नपयति हृदयं सुधारसौघेन ॥१३८
चक्षुः किमिदमिदानीं लोकाद्विपरीतमेव मे जातम् ।
चैतन्यं यतिवेशं पश्यति सर्वोऽहमेव नटलीलम् ॥१३९
स नागरोऽयं च्छलगौरकान्तिः किन्वत्र बेशं विदधेऽन्यदीयम् ।
निवद्ध आसीत् सुरतापवाधाद् राधागृहे सोऽद्य यतित्वमाप्तः॥१४०
राधाधवोऽयं रतिलम्पटोऽयं यस्येति शब्दः समभूद्व्रजे प्राक् ।
सोऽमुं प्रमाष्टं निजसद्‌यशोभिश्चकार वेशान्तरमित्यवैमि,॥१४१
न्यासिबेशोऽपि सौन्दर्य्यलीला माधुर्य्यवानयम् ।
आरोहति मम स्वान्तं कृष्ण एव न संशयः ॥१४२

एवं विमृश्य हृदये वहिरप्युवाच

किं देव मोहयसि हन्त कृपानिधे माम् ।

हे नाथ वेद्मि सुरनाथ-शिरोमणे त्वां

श्रीदेवकीजठर-सागर-दिव्यरत्नम् ॥१४३

किं देव गौरवपुषा कुरुषे मृषैव

संगोपनाय यतिवेशधरः प्रयासम् ।

वंशीरवैर्व्रजकुले रचितो ह्यनर्थो

नाद्यापि लोकवदनादुपशान्तिमेति ॥१४४

किं देव गौरवपुषा कुरुषे मृषैव

संगोपनाय यतिवेशधरः प्रयासम् ।

राधापयोधरसुवर्णघटावलम्वी

पारं गतोऽपि ननु वेद्मि मनोभवाब्धेः ॥१४५

किं देव गौरवपुषा कुरुषे मृषैव

सङ्गोपनाय यतिवेशधरः प्रयासम् ।

राधारहस्य-परिहास-विलासहेतोः

विख्यात एव यमुनाजलनाविकस्त्वम् ॥१४६

किं देव गौरवपुषा कुरुषे मृषैव

सङ्गोपनाय यतिवेशधरः प्रयासम् ।

सन्न्यासिनां क्व तनुरीक्षणसम्भ्रमार्हा

लीलातनुः क्व तव मन्मथमादकैषा ॥१४७

किं देव गौरवपुषा कुरुषे मृषैव

सङ्गोपनाय यतिवेशधरः प्रयासम् ?

लीलाविनोदपरिहास–विलासहास-

संमोहितं भजति ते जगदेव पादौ ॥१४८

किं देव ! गौरवपुषा कुरुषे मृषैव

सङ्गोपनाय यतिवेशधरः प्रयासम् ? ।

आपूरितं जगदिदं यशसा तवैव
लावण्यरूपगुणराजि-विजृम्भितेन ॥।॥४६
किं देव गौरवपुषा कुरुषे मृषैव
सङ्गोपनाय यतिवेशधरः प्रयासम् ? ।
अन्यून-पंक्ति-शतवेदपथं पिधाय
भक्ति प्रणीय विदितोऽस्ति तवावतारः ॥१५०
किं देव गौरवपुषा कुरुषे मृषैव
सङ्गोपनाय यतिवेशधरः प्रयासम् ।
हकपातमोहितधिरस्तव नाथ सत्य-
मन्ये च लोहहृदयाश्च वयं क नार्य्यः ॥१५१
किं देव गौरवपुषा कुरुषे मृषैव
सङ्गोपनाय यतिवेशधरः प्रयासम् ? ।
आत्मानमावृणु हठेन गुणांस्त्वदीयान्
को नाम गोपयितुमस्ति पुमान समर्थः ॥१५१
किं देव गौरवपुषा कुरुषे मृषैव
सङ्गोपनाय यतिवेशधरः प्रयासम् ? ।
कन्दर्पकोटिशशिकोटि-दिनेशकोटि-
देहच्छटाभिरवनी विमला तवैव ॥१५३
किं देव गौरवपुषा कुरुषे मृषैव
सङ्गोपनाय यतिवेशधरः प्रयासम् ? ।
अन्तः प्रविश्य करुणार्द्र हृदात्मनैव-
मेवं प्रमोदयसि लोकमशेषमेव ॥१५४
किं देव गौरवपुषा कुरुषे मृषैव
सङ्गोपनाय यतिवेशधरः प्रयासम् ? ।
विख्यातमेव तव देवशिरोमणित्वं
लोभास्पदं पुनरिदं प्रकटत्वमेव ॥१५५

किं देव गौरवपुषा कुरुषे मृषैव
सङ्गोपनाय यतिवेशधरः प्रयासम् ?।
लावण्य-रूपलहरी-तरलीकृतात्मा
त्वां लोभतोऽनुभजते कुलजाबलापि ॥१५६
किं देव गौरवपुषा कुरुषे मृषैव
सङ्गोपनाय यतिवेशधरः प्रयासम् ?।
लीलाशतं विविधनागरता-सहस्रं
पश्याम्यपूर्व-वनिताशतमाश्रितास्त्वम् ॥१५७
किं देव गौरवपुषा कुरुषे मृषैव
सङ्गोपनाय यतिवेशधरः प्रयासम् ?।
जानामि ते विविधभावरसाढ्य-हास-
वैदग्ध्य-मन्दमुरलीरणितादयपूर्व्वम् ॥१५८

पीत्वा पीत्वा स तद्रूपं नयनैर्निमिषोज्झितैः।
जड़ एवा भवद्दीनः किमेतदिति विह्वलः ॥१५६
आनन्द-गद्गदः क्वापि वाष्परुद्धगलः क्वचित्।
इति कर्त्तव्यतामूढ़ः पतन्नासीत् पदे पदे ॥१६०
किं न कर्त्तुं प्रभावोऽस्य समर्थः पापधीरपि।
अहमेवाभवञ्चैवं किमेतदिति विस्मितः ॥१६१
धृतिं पुनरुपालभ्य रूप-संस्मरणाद्विभोः।
इत्युत्कण्ठातिविकलः प्राह सप्रश्रयं वचः ॥१६२
श्रीतपनाचार्य्य उवाच-
हे नाथ रमण श्रेष्ठ नागराणां शिरोमणे !।
मायामाश्रित्य लोकानां किं मोहयसि चेतनाम् ॥१६३
यत्कर्म ह्युचितं नाथ ! तदेव कुरु नाधिकम्।
मां गृहाण कृपादृष्ट्या त्वामहं शरणं गतः ॥१६४

तत्त्वं तेनैव जनामि विभूतिं न च ते विभो।
सन्यासी वा योऽपि कोऽपि विचारैस्तैः किमागतम् ॥१६५
अज्ञानोऽहमकिञ्चनोऽहमभितः पापोऽहमेकान्ततः
संभ्रान्तो विषयोत्सबे मम गतिर्नास्त्येव निर्धारितम्।
किन्तु त्वच्चरणाब्जमुग्धमनसां सङ्गात् कथञ्चिन्नु मे
त्वन्नामश्रवणं भवेदिति शुभं पश्यामि गौर प्रभो !॥१६६
अहं मूको जडोऽविज्ञः पतितो निर्गुणः शठः।
केवलं दीनमालोक्य पाहि मां करुणानिधे ! ॥१६७
नाहं सुधी न गुणवान्न च धर्मशीलो
नो वा व्रती न मृदुरूपधरो न दान्तः।
त्याज्येऽपि मय्यथ दया यदि ते भवित्री
कस्तर्हि नाथ ! न दयोदयभाजनं स्यात् ॥१६८
स्वापराधं मार्जयितुं लब्धेऽहं त्वत्पदाम्बुजे।
त्वत्पौरुष-ख्यापनार्थं मां पाहीति पुनर्वृणे ॥१६९
कलोपभुक्तविषयाः कति न सुविवेकिनः।
अहो मे रागिणो नव्या नव्या विषयवासनाः ॥१७०
कति नो गदिनो जातास्ते किं नो निरजोऽभवन्।
आबाल्यं मे प्रशान्तश्च नाद्यापि विषयज्वरः ॥१७१
गणयन्नपराधान् स्वानतिचिन्ताकुलस्य मे।
वागेव न स्फुरत्यग्रे स्वापराधस्य मार्जना ॥१७२
जीवन्तं मा कृपा नो चेन्नैवाश्वासितवानसि।
मृते मयि जगन्नाथ ! किं कर्त्तव्यं बद प्रभो ॥१७३
न माता न पितास्माकं न भ्राता न सुतोऽस्ति मे।
मृते मयि जगन्नाथ ! को मदर्थे वदिष्यति ? ॥१७४
बान्धवाः सन्ति मे सत्यं भ्रातरः पितरौ सुताः।
न वहामि बलं तेषां बलं मे त्वत्कृपालवः ॥१७५

चित्रं चरित्रं चरितं त्वया यन्न तत्र किञ्चिज्जनतावधत्ते।
तथापि लक्षेषु जनेषु एकस्तस्याशयं कोऽपि कदापि वेत्ति ॥१७६
तस्मात्त्वमेवाखिलचित्र-कर्मा कालप्रवृत्तातुलधर्म-जन्मा।
मदत्र युक्तं कुरु साम्प्रतं तन् मायां न कुर्य्यां मयि तु प्रपन्ने॥१७७

करोमि शपथं नाथ ! पितुर्मातुस्तथात्मनः।
यदि त्वच्चरणादन्यज्जातु जानामि किञ्चन ॥१७८
सर्वावतार-करुणा-निःसीम-करुणो भवान्।
पापीयसामहं पापी विधेहि मदिहोचितम् ॥१७९
किमन्यदिह वक्तव्यं वक्तुं जाने न किञ्चन।
माधुर्य्यं तव चेतो मे विमोहयति केवलम् ॥१८०

यद्यकदा सर्वमर्थापिहृत्य लावण्यमेकत्र करोमि पुञ्जम्।
ब्रह्माण्डलक्षोदरतस्तथापि लीलातनोस्ते तुलना नहि स्यात्॥१८१
इत्यादि संलप्य सुखार्णवाश्रयः पुनः सुखेनैव धृतिञ्च लब्ध्वा।
स्तुतिञ्चकार प्रमोदाश्रुगद्गदश्चैतन्यचन्द्रस्य सहस्रनामभिः॥१८२

ओं नमः श्रीशचीनन्दनाय। ओं नमः सर्वलोकगुरवे।
ओं नमः सर्वलोकधर्माय। ओं नमः सर्वलोकेश्वराय।
ओं नमः सर्वलोकनिस्तारकारणाय। ओं नमः विश्वरूपानुजाय ॥

निसर्ग-दुर्बोध-निजप्रभाव-विमोहिताशेषजनो गभीरः।
शचीस्तन-क्षीरसुधाशनमत्तः कवीन्द्रपारीन्द्रसहस्रविक्रमः॥१८३(४)

निरस्तमायावरण-निजदेह-प्रकाशकृत्।
गौडदेश-जनासंख्य-पुन्यसार-समुच्चयः ॥१८४ (६)
आद्यन्तमध्यरहित स्तारुण्य-प्रस्फुरद्वपुः।
अदोषदर्शी सौन्दर्य्य-धैर्य्य-गाम्भीर्य्य-शौर्य्यवान् ॥१८५ (१०)
द्विजराज-जगन्नाथ-द्विजराजगुणात्मजः।
शचीजठररत्नाब्धि-महारत्नं गुणार्णवः ॥१८६ (१३)

नवद्वीपशिशुक्रीडापरः शैशवविभ्रमः।
पदाम्भोजाङ्कित-शचीगेह-क्रीडापरायणः ॥१८७ (१६)
शचीस्मरे-कृतस्मेरः शचीरोदन-रोदनः।
औग्रक्रीड़नकोद्विग्न-शचीशिक्षास्मिताननः ॥१८८ (१९)
काकपक्षधरो धूलिधूसरः स्वेदवन्मुखः।
क्रीडाश्रान्तिस्खलद्बद्धधटिव्यक्तलसत्कटिः ॥१८९ (२३)
श्लथद्बन्धधटीलम्ब-केशव्यग्रकराम्बुजः।
लोलालकः पञ्चजूटः प्रतिवेशिगृहप्रियः ॥१९० (२७)
जगन्नाथकरालम्बी जगन्नाथसुखप्रदः।
तद्विश्रुत-रिक्तपाद-मञ्जुमञ्जीरसिञ्जितः ॥१९१ (३०)
सप्त-पञ्चार्भकाक्रीडी लम्बकेशाकुलेक्षणः।
ध्वजाङ्कित-पदालक्ष्य-वालकान्वेष्य-पद्धतिः ॥१९२ (३३)
मुरारिगुप्त-करुणाकृत-तद्वेश्म-खेलनः।
मुरारिगुप्तभवन-क्रीड़ाताण्डवपण्डितः ॥१९३ (३५)
स्वमायामुग्ध-चौरांसगतः सर्वसुखावहः।
शिशुक्रीडाचलत्पाद-रणत्कनकनुपूरः ॥१९४ (३८)
अदृष्टाश्रुतचाञ्चल्य-शचीविस्मयकारकः।
अलब्धभक्ष्य-सामर्षो भग्नकुम्भान्नभाजनः ॥१९५ (४१)
मधुरोक्तिरञ्जिताम्बा मार्जितनिजदोषसञ्चयश्चतुरः।
पूर्वावतार-निजजन-संभ्रमकारी निगूढ़निजभावः ॥१९६ (४५)
भ्रमणपरः पदुधावनशब्दित-मणिकिङ्किणीजालः।
अम्बाकौतुकवर्द्धनताण्डवलीला–गतिर्मायी ॥१९७ (४९)
मोहनखेलाविकल-स्वाम्बात्यक्तेतिकर्त्तव्यनिचयः।
प्रतिपद्ताण्डवलीलः पावित-मोहिताङ्कितक्षौणिः ॥१९८ (५२)
गंगातीर-विहारी निजजन-नयनोत्सवाक्रीडः।
गंगातरङ्गशीकर-सेवनकुतुकी दरस्मेरः ॥१९९ (५६)

वालुकातटनटो नटवेशो वालुकानिचयखेलयोत्सुकः ।
अच्छावालुकातट तद्देशोद्वीक्षणास्तिमितविस्तृतेक्षणः ॥२०० (६०)
धावमानशिशुसङ्घसङ्गतः शैशवोचितमनोहरवेशः ।
वालयुद्ध-परिहासलम्पटश्चित्तविभ्रमविमोहितवालः ॥२०१ (६४)
पादलम्बिधटिकाञ्चलश्चलत्पुष्पदामविभूषितचूडः ।
वर्त्तुलायतसुचारुनितम्वश्चित्रनाट्यमहितांघ्रिपंकजः ॥२०२ (६८)
भूरिकाल-विरहातुरगङ्गा-नूतनीकृत-पदाम्बुजसङ्गः ।
वालुकानिचय-पादविक्रम-स्थाणुपादसरसीरुहचिन्हः ॥२०३ (७०)
स्थूलसूक्ष्म-पतगाङ्घ्रिलक्षणप्रेक्षणातिकुतुकी तरलाक्षः ।
पंक्तिभागपर-पक्षिगणाङ्घ्र्युद्देशधावनपरो दरस्मितः ॥२०४(७४)
मज्जनार्थगतमातृविलोकप्राप्तभीतिभरलब्धसमीपः ।
धावनभ्रमणताण्डवलीला-कौतुकातिसुखविस्मृतगेहः॥२०५ (७६)
कृतस्नान-शचीस्पर्श-दोष-हर्ष-परायणः ।
पाकस्थाली-स्पर्शहर-शचीचुम्वन-भाजनम् ॥२०६ (७८)
स्तनपान-क्षणस्मेर-मातृमोदकराननः ।
वस्त्रगुप्तामरचार्हि-शर्करागुटिकाग्रहः ॥२०७ (८०)
कालवर्द्धित तनुद्युतिव्रज-प्रस्फुरन्मधुरिमाच्छटाश्रयः ।
तातवाक्य-परिशीलनधीरः सुन्दराम्वरधरः स्थिरबुद्धिः ॥२०८ (८४)
निजकुलसमुचितविद्या-परिशीलनमाधुरीचतुरः ।
गंगादास-महाशय-गुरुत्व-विख्यापनाभिज्ञः ॥२०९ (८६)
उपनत शतशत शिष्य प्रधानभूतः स्फुरन्मेधः ।
विशदार्थ-वोधकारी शिष्यगणोद्गीतवहुमानः ॥२१० (९०)
मध्यनीलमणिस्वर्णहारो रजतहारवान् ।
विश्वरूपानुजः सन्ध्यवतारः सुरचेष्टितः ॥२११ (९५)
विद्याभ्यासश्लथासक्तिः स्फुरिताशेषदर्शनः ।
वयस्यगणसंसर्ग-परिहासपरायणः ॥२१२ (९८)

परिहास-रसावेश-विस्मापितसभाजनः ।
परिहासकथाभङ्गी हासितानुगतगुरुः ॥२१३ (१००)
गुरुभक्तिपरायणः सुशीलः सहजनन्दसुधामहाम्बुधीन्दुः ।
अनिरूपितरूपयौवनश्रीः परमानन्दरसायनः सुधीरः ॥ २१४ (१०६)
शंख-चक्र-गदाम्भोज-वज्राङ्कितपदाम्बुजः ।
सर्वलक्षण- सम्पन्नतनुः सर्वगुणाश्रयः ॥ २१५ (१०६)
अंगप्रत्यंगचक्रादि भक्तदेह-प्रकल्पनः ।
क्रीडाकलावद्धसङ्ग-पण्डितश्रीगदाधरः ॥ २१६ (१११)
शचीजठरसम्भूतः शचीक्रोड़बिभूषणः ।
नानामणिगणप्रोत-हेमकुण्डलमण्डितः ॥ २१७ (११४)
रक्तहेमाम्बुजपदः पद्मपत्रविलोचनः ।
अशेषशास्त्रज्ञानार्कः शुद्धबुद्धि-विशारदः ॥ २१८ (११८)
अधीतसर्वविद्यश्च सदुपाध्याय सम्मतः ।
दृष्टश्रुताधीतशास्त्रव्याख्याता लोकपूजितः ॥ २१९ (१२२)
गुरुव्याख्यात शास्त्रार्थ नानाबर्त्मप्रदर्शकः ।
सर्वशास्त्रनिगूढ़ार्थ-व्याख्याकृत् स्वप्रकाशकः ॥ २२० (१२५)
आकस्मिकप्रेमधारा-मातृविस्मयकारकः ।
मिलितानेकसत् शिष्य-नित्याध्यापन-तत्परः २२१ (१२७)
कन्याग्रहण-कारुण्य-पावितश्रीसनातनः ।
स्वयं गृहीत भगिनी गङ्गान्तर्जलदायकः ॥ २२२ (१२६)
कालप्राप्त-जगन्नाथ-स्वपदाम्बुनदीददः ।
कृतशोको लोकपरो विषण्णमुखपङ्कजः ॥ २२३ (११३)
अशेषद्रव्यसम्भार-निर्वाहितपितृक्रियः ।
दानपूजितभूदेव-पापदैन्यविनाशनः ॥ २२४ (१३५)
सम्मानितानेकविप्रः प्रीणिताशेषसज्जनः ।
भोजिताशेषभूदेवो विनीतो नयभूषणः ॥ २२५ (१४०)

शचीप्रियः शचीपुत्रः शचीत्राण-परायणः ।
लोकशिक्षाविधानार्थ-कृष्णनामप्रगायनः ॥ २२६ (१४४)
अम्बाश्रुताग्रजकथः सदाग्रजपरायणः ।
अग्रजान्वेषणपरो गयाविजयसादरः ॥ २२७ (१४८)
अश्रुताग्रजवृत्तान्तो न दृष्टाग्रजपद्धतिः ।
अदृष्टभ्रातृदुःखार्त्तो निजमाया-प्रकाशकः ॥ २२८ (१५२)
श्रीमदीश्वरपुरी-कथान्तरस्मारिताग्रजनि-पूर्ववैभवः ।
श्रीमदीश्वरपुरीस्तुतिपाठाकलनोच्छलितप्रेमसागरः ॥ २२९ (१५४)

आत्मविस्मृतिकरात्मकैतवः
प्रेमभक्ति-विदितात्मवैभवः ।
नोदितार्थ-दिनरात्रि-विचार
सुप्तिभुक्तिरहितः स्फुटकान्तिः ॥ २३० (१५४)
कोटिकोटिकमलाश्रितदेहः
कोटिकोटिकमलाप्रकाशकृत् ।
कोटिकोटिरविदुःसहतेजाः
कोटिकोटिशशिनिर्म्मलकान्तिः ॥ २३१ (१६२)

त्यक्तेश्वरपुरीसङ्ग-क्षुब्धातिक्षुब्धमानसः ।
भक्तिप्रख्यापनाचार्य्यः शचीस्नेहभरालसः ॥ १३२ (१६५)
क्षणदिनमुहूर्त्त-समुदित-मधुरमहावेशविस्मितशेषः ।
अतिमृदुसुमधुरकान्तिः सुचारुवेशो नटानन्दः ॥ २३३ (१६६)
निरवधिकृतजनसंगोत्कीर्त्तन-निहितात्मसम्पत्तिः ।
स्वपदप्रवर्त्तितजगज्जनताविख्यातलसत्कीर्त्तिः ॥ २३४ (१७१)
पूर्वप्रथितभ्रातृश्रीमन्नित्यानन्दशुभागमः ।
लब्धावधूतसङ्गः स्वयशः प्रख्यापनप्रयतः ॥ २३५ (१७४)
मिलितावधूत-ताण्डव-मह-प्रकाशितकृपाःजलधिः ।
उभय प्रकाशमोहित-सकल-नवद्वीपनेत्रवल्लोकः ॥ २३६ (१७६)

पूर्ववर्त्ति निजसत्कथारसप्रीतिगान-परितोषितानुगः ।
नागरीजनदृगन्तपातजस्नेहहर्षपुलकातिलज्जितः ॥ २३७ (१७८)
श्रीनारदश्रीनिवासपण्डितस्तुतिमोदकृत् ।
श्रीचन्द्रशेखरागारसुखक्रीड़ा-परायणः ॥ २३८ (१८०)
अमलः कमलानाथो गोपीनामस्मिताननः ।
गीततागडववैदग्ध्य-चातुर्य्य-रससागरः ॥ २३९ (१८४)
चतुःषष्टिकलानाथो गोपीनामनताननः ।
निजगोकुलवैदग्ध्यप्रकाशी निजभक्तिमान् ॥ २४० (१८८)
तरुणारुणसच्छायदुकूलोज्ज्वलविग्रहः ।
अशेषभावचतुरो भावास्वादनलालसः ॥ २४१ (१९१)
कुमारलीलः कुतुकी परिहासकलागुरुः ।
ऊर्द्ध्ववद्धस्थूलजूटः स्मयशास्त्रवृहस्पतिः ॥ २४२ (१९६)
ताण्डवोल्लासितश्रीमच्चरणाम्बुजभूषणः ।
कोटिकन्दर्पलावण्यः कोटिकन्दर्पसुन्दरः ॥ २४३ (१९९)
भक्तभावरसास्वादगुप्तरासविशारदः ।
कोटिकन्दर्पसूः श्रीमान् कोटिकन्दर्पनागरः ॥ २४४ (२०३)
संसारोत्तापनिस्तारी भयनाशकरोदयः ।
सुचारुवदनः कञ्जलोचनः क्लेशमोचनः ॥ २४५ (२०८)
लावण्यसारसर्वस्व-प्रादुर्भूतलसद्वपुः ।
ब्रह्माण्डकोटिलावण्यसारसञ्चयलाञ्छितः ॥ २४६ (२१०)
अलेख्यस्वर्गपीयूषसारशीतलभाषणः ।
सिंहचारुलसद्ग्रीवः कम्बुचारुसुकंठवान् ॥ २४७ (२१३)
विशालभालविभ्राजच्चन्दनात्तिपनोहनः ।
कपोलमण्डलद्वन्द्वविभ्राजन्मणिकुण्डलः ॥ २४८ (२१५)
अरुणाधरविभ्राजन्मन्दहाससुधाश्रयः ।
मृदुहासदरव्यक्तदन्तद्योतितादिङ्मुखः ॥ २४९ (२१७)

अरुणोष्ठचारुसौष्ठवनिन्दितमुखजातपक्वबिम्बश्रीः।
श्रवणविभूषणमणिमयकुण्डलयुगलच्छटाघटाकामभृत्॥२४८ (२१६)
कोटीसुधानिधिघटितवक्त्रुलसाल्हादसीधुमद्वदनः।
कुटिलकटाक्षोदयावनद्ध नवद्वीपनागरी-निकरः॥ २५१ (२२१)
मदमत्तवारणेन्द्रप्रतिमगतिः सिंहशावकोऽस्वी।
काञ्चननिर्म्मितमणिमयनूपुरनादाहृताङ्गनानिवहः॥ २५२ (२२४)
अरुणधटिकटिभूषणस्ताण्डवपाण्डित्यशिक्षिताशेषः।
विस्तृतलालितसुकोमलपादाम्बुजमाधुरीसिन्धुः॥ २५३ (२२७)
स्वर्णप्रवालगुम्फितमध्यमणिस्फीतहार सद्वक्षः।
पल्लवमृदुतरकरतालकलितलक्ष्यनामजपलीलः॥ २५४ (२२९)
दयाप्रेमार्द्र हसितविस्तीर्णप्रेमसागरः।
कृपामधुरदृक्पातवशीकृतजगज्जनः॥ २५५ (२३१)
अङ्गलेपमृगनाभिलालितो भावसूचकदृगञ्चलपातः।
सर्वलोकनयनोत्सवकारी हासभास्वरमुखाम्बुजद्युतिः॥२५६(२३५)
पुगपुञ्जपरिपूर्णमुखश्रीः स्वेदकारिमहितोरुनासिकः।
तत्तदद्भुतरहस्यशीलनः प्रान्तरक्तपरिवेष्टिताम्बरः॥ २५७ (२३९)
कर्पूरागुरुकस्तुरी गन्धपूरितदिङ्मुखः।
सुवृत्तदीर्घदोर्दण्डलसत्कनककंकणः॥ २५८ (२४१)
सुवर्ण-वर्णकण्ठस्थस्वर्णहारविभूषितः।
प्रेमाश्रुधौतसर्वाङ्गस्फुरन्निर्मलकान्तिभृत्॥ २५९ (२४५)
नवस्फुरितबन्धुकबन्धुराधरपल्लवः।
पद्मरागमणिन्यस्तमुक्तास्वच्छरदच्छविः॥ २६० (२४७)
सुचारुकेशः सुमुखो हेमस्फुरितनासिकः।
धनुर्ध्वजादिसम्पन्नपाणिव्यक्तयवांगुलिः॥ २६१ (२५२)
अशेषदेहसौन्दर्य्य-कोटिकन्दर्पनिन्दकः।
अशेषगुणसम्पत्तिः सर्वलोकोपकारकः॥ २६२ (२५५)

सुगुम्फश्चारुचलनः सुकोमलपदाम्बुजः ।
आत्मारामेश्वरोन्मादि-राधावेशमनोहरः ॥ २६३ (२५६)
नागरीनयनानन्द-मन्दहाससुधाकरः ।
मनोरथपराभिष्ट-संसूचकनिरीक्षणः ॥ २६४ (२६१)
भावप्रभूतप्रमदासाकूतेक्षणपण्डितः ।
अत्यन्तप्रेमसंरम्भवलवदट्टहासभृत् ॥ २६५ (२६३)
प्रेमप्रकाशविस्तीर्णसिंहनादसमस्वनः ।
कोटिसूर्य्यप्रतीकाश-सुमाधुर्य्यारुणांशुकः ॥ २६६ (२६५)
सुदुर्वर्ष-सुदुर्दर्श-प्रेमारम्भमहोदयः ।
सुदर्शनपराशेषमङ्गलप्रेमऋद्धिदः ॥ २६७ (२६७)
प्रेमाश्रुविगलद्धारो गलन्निष्ठीबनाम्बुधिः ।
गलघर्मार्द्रवसनः स्रवदुत्फुल्लनासिकः ॥ २६८ (२७१)
घनशीत्कारवान् जृम्भावान् घनश्वासवान् मुहुः ।
घनहासः स्वपार्श्वस्थ-तत्कालप्रेमदायकः ॥ २६९ (२७५)
प्रेमप्रोद्यत्सिंहनादशङ्कितीकृतदिग्गजः ।
अनवच्छिन्नपुलको मनकम्पः स्थिरासनः ॥ २७० (२८०)
वामपार्ष्णिकराघातकृष्णोऽहमितिसूचकः ।
एकद्वित्रदिनब्यापि प्रेमारम्भमहोत्सवः ॥ २७१ (२८२)
त्रयोविंशदिनव्यापि-प्रेमहासप्रकाशकृत् ।
त्रिकोणचिवुकः शुष्कनिमीलितमुखस्मितः ॥ २७२ (२८५)
त्रिवलीवलितः श्रीमद्दीर्घस्थूलशिरोधरः ।
केशविन्यास-संवद्ध-मालतीमाल्यमण्डितः ॥ २७३ (२८८)
ललितांगुलिविभ्राजन्माणिकाञ्चनमुद्रिकः ।
गभीरारक्तभावर्त्त-नाभिमग्नघटीधरः ॥ २७४ (२९०)
समानवक्षो जघनो वर्त्तुलोरुः सुगुल्फवान् ।
चारुजानुश्चारुजङ्घः सुकोमलपदाम्बुजः ॥ २७५ (२९६)

हयग्रीवामणिग्रीवः सुन्दरस्पर्शकेशभृत् ।
कमलाश्लेषरसिकः कमलास्तनचन्दनः ॥ २७६ (३००)
कमलाहृदयानन्दः कमलानयनाञ्जनः ।
त्रिवली-विलसन्मध्यः सिंहमध्यः स्मरालसः ॥ २७७ (३०५)
सुपीन-वर्त्तुल-स्निग्ध-क्रमस्थूलमहाभुजः ।
करिशुण्डाकृतिभुजो नामासक्तकरांगुलिः ॥ २७८ (३०८)
स्फुरन्नखमणिश्रेणीमिश्रांशुकरपल्लवः ।
लावण्यसारसर्व्वाङ्गश्चन्दनाञ्चितविग्रहः ॥ २७९ (३११)
प्रत्यंगरभसावेशप्रभवानन्दबन्धुरः ।
स्वभावशीतलः प्रेमदर्शितानेकपौरुषः ॥ २८० (३१४)
सदाप्रेमभराक्रान्तसर्वाङ्गो गतिमन्थरः ।
आभंगुरभ्रूयुगल ईषदारक्तलोचनः ॥२८१ (३१८)
घूर्णायमाननयनः पूर्णचन्द्रामलाननः ।
वहिः श्यामायतस्थूलचमत्कारिकनीनिकः ॥ २८२ (३२१)
कर्णान्तायत-दृक्पात- हेलालावण्यसूचकः ।
भाववान् स्वगुणालाप-जगतीभावदायकः ॥२८३ (३२४)
श्रोत्रानन्द-यशोराशि र्नेत्रानन्दतनुच्छविः ।
घ्राणानन्दलसद्गन्धः हृदयानन्द-सद्गुणः ॥ २८४ (३२८)
अमृतस्त्रावि-दृक्पातः सुधासारार्द्रसंकथः ।
अमृतोद्गारिसद्वेणुसुधास्यन्दिकलस्वनः ॥ २८५ (३३१)
रसनामृतसम्भुक्तः स्पर्शामृतकराम्बुजः ।
केशामृतलसन्मूर्द्धाप्रकाशामृतदेहधृक् ॥ २८६ (३३६)

अनन्यसाधारणरूपयौवनः
शचीतनुप्राणमनोऽब्धिरञ्जनः ।
अशेषलोकोत्सवसारदर्शनः
समस्तलोकाभ्युदयोरुसद्गुणः ॥ २८७ (३४०)

यज्ञोपवीतधारी द्विधा विवाहोत्सवे कुतुकी ।
अखिलविनोदविदग्धः कमलालावण्यमाधुरीमुग्धः ॥ २८८ (३४४)
आचमनागतकमलास्मितसम्मुखमार्जनारसिकः ।
निजकर्णाहितचम्पककलिका-कर्णार्पणप्रसादपरः ॥ २८६ (३४६)
कमलापितृगृहभोजनविनोदकारी विनोदमयदेहः ।
अनुगतकमलाजनतानिर्म्मितकौतुककलितकृपामधुरः ॥२६० (३४६)
परिहास्यजनोपहासकः प्रणयाधीनजनाङ्कसुप्तदेहः ।
परिहास्यजनोपहसितः सकलानन्दमयकुटुम्बलोलः ॥ २६१ (३५४)
वर्त्मवीक्षितपदाम्बुजचिन्हः
स्निग्धदृष्टिमिलिताखिललोकः ।
तन्मुखाकलनविस्मितलोकः
स्निग्धवीक्षणचकोरनिपीतः ॥ (२६२ (३५७)
भग्नावधूतदण्डप्रकटकपटक्रोधोऽन्तरानन्दः ।
गोकुलवर्त्मविहारी निजपार्षदश्रमनिरासी ॥ २६३ (३६१)
भारतीकेशवप्रेमकृष्णनामवरप्रदः ।
जगन्नाथकुलानन्दः शचीकुलविभूषणः ॥ २६४ (३६४)
श्रीसार्वभौमविश्वासकृत्तत्स्थालयन्नभोजनः ।
कोमलाङ्घ्रितलो दूरीभूतसङ्गिगणाग्रणी ॥ २६५ (३६७)
पीततक्रपरिपूरितरत्न-स्तोमकुम्भयुगतोषितगोपः ।
प्रीतिमज्जनविनोदितुरीयप्रेमभक्तिदकृपाविजयीश्रीः ॥ २६६ (३६६)
निजसंगिगणश्रान्तिनाशकश्रीमुखाम्बुजः ।
वनपल्लवितस्निग्धनवशाखिकुलाश्रयः ॥ २६७ (३७१)
श्रमोषितानुगस्वेच्छामण्डलीगणमध्यगः ।
स्वपादधूलिमहितपुरग्रामाकरव्रजः ॥ २६८ (३७३)
मथुरानगरीलोकलोचनानन्दचन्द्रमाः ।
गोपीपूर्वपरानन्दस्मारकस्मेरसन्मुखः ॥ २६६ (३७५)

विपरीतवेशविस्मित-ब्रजवनितान्योन्यकथाहसितः ।
गोमुखसमुदितहाम्वारवस्थिरलोचनावलितः ॥ ३०० (३७७)
हृदयप्रमोदनिर्भरविस्मितगोपाललोचनापीतः ।
आलोकनजडलोचनगोकुलनगरीजनानन्दः ॥ ३०१ (३७९)
मथुरामल्लदुष्प्रेक्ष्य दृप्तोरः स्कन्धसद्भुजः ।
आत्मसंगोपनव्यग्रः स्वप्रकाशमहोदयः ॥ ३०२ (३८२)
गोकुलप्रेक्षणोत्साही गोकुलानन्दवर्द्धनः ।
स्वसंकेतस्थल-क्षेम-प्रेक्षणप्रेमविह्वलः ॥ ३०३ (३८५)
श्रमोपशमनप्रेयः पूर्वनीपतलाश्रयः ।
नौकाविनोदसंस्मारियमुनादर्शनोत्सुकः ॥ ३०४ (३८७)
लुप्तपदांकव्याकुलयमुनातटपादचिन्हधनदानः ।
रासमण्डलविनोदकौतुकी प्रेमासनकुलहरीलसद्वपुः ॥ ३०५ (३९१)
व्यक्तरासरसासक्तगोपीभावाकुलध्वनिः ।
गोपीभावालसतनुर्भावप्रस्मरणाकुलः ॥ ३०६ (३९३)
गुप्तपद्धतिसन्न्यास-प्रकाशगुरुदीपकः ।
अन्तर्विलोलितहरिप्रेमसारसुखाम्बुधिः ॥ ३०७ (३९५)
भावसंवरणात्यन्तविस्फारिप्रेमविह्वलः ।
सोढानेकावलाभावशस्त्रः सर्वं सहासमः ॥ ३०८ (३९८)
अलब्धरासगोपस्त्रीदुःखकारुण्यरोदनः ।
गोपीहृदयसम्भूतदुःखदावाग्निहारकः ॥ ३०९ (४००)
कृपादृक्पातलहरी सुधाधारानिपानभूः ।
कान्तागारेक्षणसुधीकृतगोवर्द्धनाश्रयः ॥ ३१० (४०३)
इन्द्राकोपाश्रुधारौघवृष्टिप्लावितगोत्रभः ।
समसानूस्थलावासकृतेक्षणमुद्रार्द्र धीः ।
यमुनाकुलसावतायी द्वादशोपवनाश्रयः ॥ ३११ (४०७)
निजजननयनमनः सुखदायकपूर्वावतारसुखभूमिः ।
लीलाविहारकारी हसितनिजलोकनिजहासः ॥ ३१२ (४१०)

स्वविभूतिविहारलम्पटः स्मरसञ्चारकभंगुराक्षिपातः ।
मदमन्दगतिः स्मिताननो रससंघूर्णितलोचनो नृधर्मा ॥३१३(४१६)

प्रख्यातनागराचार्य्यः सौन्दर्य्यानन्ददेहधृक् ।
प्रेमभावोदितवपुः प्रकटानन्दविग्रहः ॥३१४ (४१६)
मथुराजन-सद्भावप्रीतो मधुरभाषणः ।
उपायनकरासंख्यजनविस्मयकारकः ॥३१५ (४२२)

नानागुणमयद्रव्यभोजनैक-प्रलोभनः ।
निजलोक-क्षेम-परकथामधुरभाषणः ।
कथाहास्यातिमधुरदीर्घकालकृतासनः ॥३१६ (४२५)
नित्यानन्दप्रियभ्राता नित्यानन्दबलप्रदः ।
नित्यानन्दप्रभावज्ञो नित्यानन्दैकजीवनः ॥३१७ (४२६)

वक्रेश्वरदयोन्मादी प्रेमसर्व्वस्वदायकः ।
काशीश्वरप्रश्रयदो रामानन्दकथाप्रियः ॥३१८ (४३३)
आचार्य्य-श्रीमदद्वैतदेहशक्तिबलप्रदः ।
अद्वैतभावसम्पूर्णः श्रीमदद्वैतपालकः ॥३१९ (४३६)
मुकुन्ददत्तातुलभक्तिभाव-दयाप्रदताखिलगीतिकासुधः ।
अशेषसंसेव्यपदारविन्दो गदाधरोपास्यपदाम्बुजासवः॥३२० (४३६)
सूक्तापूतमुखाम्भोज-कविचन्द्रार्च्चदः प्रभुः ।
सुखानन्दपुरीत्राता भवानन्दप्रसादकृत् ॥३२१ (४४३)
निसर्गशीतलालाप-निजलोकसुखार्णवः ।
सत्यराजान्वयत्राता गृहीत-शिशुनन्दनः ॥३२२ (४४६)
रामानन्दाद्यतिप्रीतो गङ्गादासद्विजप्रियः ।
वेदतत्त्वार्थनिर्णीत-मानुषातीतविग्रहः ॥३२३ (४५०)
अनन्यसाधारणभक्तिभाव-गृहीतदत्तान्वयबासुदेवः ।
सर्वावतारप्रथितोरुदाख्यमुरारिगुप्तप्रणयैकदाता ॥३२४ (४५२)

प्रेमभक्तिरसव्यग्रदासवंशगदाधरः ।
निजकारुण्यविभव-कृष्णदासकृपाकरः ॥३२५ (४५४)
नानादेशोद्गीयमानस्वगाथामृतजज्ञभुक् ।
धातुद्वयोपभोगार्ह-द्रब्यभोजनपुष्टिभाक् ॥३२६ (४५६)
हरिदासप्रणयदः श्रीमद्विष्णुपुरीश्वरः ।
भारतीकेशवत्राता सत्यसन्धः सनातनः ॥३२७ (४६१)
नानादिग्देशसञ्चारी वानप्रस्थमुनिप्रियः ।
उपवीतधर ब्रह्मचारी मातृवशो गृही ॥३२८ (४६६)
सन्न्यासी लोकशिक्षावान् लोकाभिप्रायपूरकः ।
सार्वभौमदयासम्पद्दर्शिताद्भुतषड्भुजः ॥३२९ (४७०)
वर्णेष्वहं द्विज इति बेदरीत्या द्विजाश्रयः ।
भक्तिशिक्षाकल्पतरुः सन्न्यासाश्रमपावनः ॥३३० (४७३)
सन्न्यासवेशविस्फुर्ज्जल्लावण्याम्वुधिनायकः ।
द्विजभक्तो द्विजप्रियो द्विजनाथोऽतिथिप्रियः ॥३३१ (४७८)
कीर्त्तनै र्विश्वभरणात् श्रीविश्वम्भरनामधृक् ।
सतीशचीप्रेमदाता पाता कलियुगे नृणाम् ॥३३२ (४८१)
सर्वावतारसुखदः सचरित्रकथाघृणः ।
निजप्रेमप्रदानोत्थ-भक्तप्रेमरसावशः ॥३३३ (४८४)
धन्याधीनकृपादन्तो लोकनिस्तारभारधृक् ।
अमानामानदः कृष्णदासवैद्यप्रियेश्वरः ॥३३४ (४८६)
रघुनाथभिषगज्ञातो देवानन्दद्विजप्रियः ।
रामभद्रपतिर्वीरभद्रत्राता कृपाम्वुधिः ॥३३५ (४९४)
वल्लभसेनसदीशः श्रीभृद्रघुनाथनायकः सुमनाः ।
श्रीचन्द्रशेखरपति वैद्यश्रीविष्णुदासेशः ॥३३६ (४९९)
सुधानिधिप्रियः श्रीमत्कलानिधिगुणप्रियः ।
जानकीनाथविप्रेशो द्विजश्रीधरवान्धवः ॥३३७ (५०३)

गोपालेशो यादवेशो रामलक्ष्मणसुप्रियः ।
चन्दनेश्वरसुप्रीतो जगन्नाथगणप्रियः ॥३३८ (५०८)
ओड्रप्रियशिखिभर्त्ता केशवबन्धु मुरारिदासेशः ।
परमानन्दसदीशः सेनजगन्नाथबान्धवो बन्धुः ॥३३९ (५१४)
धन्य-श्रीजयदेबभाग्याखिलसत्तद्गीतनृत्योदयः
श्रीविद्यापति-भावबोधविकसद्गोपीसुखोद्दीपनः ।
चण्डीदाससुखप्रसादकुतुकी संगीतगीतार्णवः
श्रमद्भागवतार्थबोधबिजयी बैदग्धचूड़ामणिः ॥३४० (५२०)
यतिवेशक्षमासार श्चतुर्थाश्रमपावनः ।
नवद्वीपावनीचन्द्रः सर्वसम्पद्सुधाधियः ॥३४१ (५२५)
दामोदरस्वरलेशः सनातनदयालवः ।
वाणीनाथमिश्रस्वामी दासगोविन्दवत्सलः ॥३४२ (५२६)
श्रीरामदास-कविचन्द्रसुगानतुष्टः
स्वाधीन ईश्वरपुरी-प्रणयप्रसादः ।
कंसारिभूरिकरुणो नरसिंहतीर्थ-
गोप्ता कृपाद्र नयनेक्षितशङ्कराख्यः ॥ :४३ (५३४)
जगद्विख्यात-सत्कीर्त्तिरवधूतप्रियानुजः ।
गभीरनाभिकमलो राजत्तनुरुहावलिः ॥३४४ (५३८)
नामसूत्रधरः सत्यः कृष्णनामपरायणः ।
अतर्क्यमहिमा पुष्पोद्यानगूढ़ाश्रमः सुधी ॥३४५ (५४४)
निजलोकप्रेमदाता दर्शनक्षीणपातकः ।
भक्ताभिप्रायवशगः प्रेमभावलसद्वपुः ।
वेदगर्भनिगूढ़ात्मा गोविन्देच्छाविनोदकः ॥३४६ (५५१)
प्रेमोद्गारस्वनाहूतचन्द्रसूर्य्य-सुराधिपः ।
महानन्दप्रियः सर्वदोषहा गुणसागरः ॥३४७ (५५५)

नीतिप्रवर्त्तनाचार्य्यो मायिनामपि मायिकः ।
सर्वलोकैकरसदः कलिदोषसहस्रहा ॥३४८ (५५६)
वेदवक्ताऽन्तहस्वादी निजभक्तात्मशोधकः ।
अनेकपातकव्यग्र नामम्रृग्यमहोदयः ॥३४६ (५६३)
कौस्तुभोद्भासितश्रीमद्वक्षा हेमाङ्गुलीयकः ।
गौरज्योतिः कृष्णवर्णो द्विजवंशसुधानिधिः ॥३५० (५६८)
कबिराजमिश्रभर्त्ता कर्त्ता संसारचक्रस्य ।
हन्ता दुष्टजनानां च संसारसागरोद्धर्त्ता ॥३५१ (५७२)
सर्वज्ञः सर्वदर्शी च सर्वसाक्षी महाप्रभुः ।
भक्तित्राता भक्तिदाता भक्तिदानजगद्गुरुः ॥३५२ (५७६)
लोकबन्धु र्लोकनाथो भक्तपक्षकृपामयः ।
गृहीतैश्वर्य्यमाधुर्य्य–परमानन्दमण्डितः ॥३५३ (५८३)
दासवंशजगन्नाथनागरो रससागरः ।
अशेषः नागरीनाथः स्वयंशक्तिश्च शक्तिमान् ॥ ३५४ (५८८)
जगत्पिता जगद्बन्धुः जगत्स्वामी जगद्धनम् ।
वैकुण्ठनाथः श्रीनाथः क्षीराब्धिशयनप्रियः ॥३५५ (५६५)
अनन्तशायी भूमीन्द्र-कवीन्द्र-कार्य्यकौतुकी ।
मुनिधर्मा मुनीन्द्रश्च नारदादिमुनीश्वरः ॥३५६ (६००)
ब्रह्मपादो मुक्तिपादस्तीर्थपादः सरित्पादः ।
अकिञ्चनः शुद्धसत्त्वः सत्त्वातीतगुणाश्रयः ॥३५७ (६०७)
वेदमृग्यः शास्त्रमृग्यो योगीमृग्योऽतिदुर्लभः ।
मुनिमृग्यः सत्यमृग्यो दयामृग्यः शुभोदयः ॥३५८ (६१५)
ज्ञानमृग्यो ध्यानमृग्यः स्वाध्यायव्रतमार्गितः ।
दुर्वासनातमोहन्ता प्रेमधारामहासिधृक् ॥६५६ (६२०)
धर्मशास्त्रार्थनिर्णेता तत्तद्देशैकनायकः ।
नीलाचलतलावासो वनमालाविभूषणः ॥३६० (६२४)

व्युदस्तमायः सर्वज्ञः साधुनेत्रमहोत्सवः ।
दयाश्रुतरसाविष्टो गोविन्दानन्दसंस्तवः ॥३६१ (६२६)
प्रेमभक्तिवलिता सुखभोक्ता बेदसारनिजकीर्त्तनवक्ता ।
प्रणयदृश्या प्रेमवतकौतुक शैशवावधिसुलालितवासः॥३६२ (६३३)
कृष्णक्रीडः कृष्णलीलः कृष्णमानी कृपाजड़ः ।
शान्तोऽपि नागरः शुद्ध ईषत्कपिललोचनः ॥३६३ (६४१)
बेदान्तमृग्यः संकल्पवाह्यः स्वेच्छाप्रकाशकः ।
कृपालुर्भक्तसुलभः स्वगुणाख्यानरूपधृक् ॥३६४ (६४७)
मूर्त्तिमत्केलिसम्पत्ति मुक्तानन्दरसोत्सवः ।
कृपाप्रत्यक्षशृङ्गार रसदो रसिकाग्रणीः ॥३६५ (६५१)
भूतिदाता भूतिहन्ता भवदो भवनाशकः ।
अच्युतानन्द-सद्भक्तिदत्तस्वपदपङ्कजः ॥३६६ (६५६)
ब्रह्मानन्दपुरीश्वर ओड्रवासी-कृष्णदासेराः ।
श्रीपुरुषोत्तमभर्त्ता ओड्रशिवानन्दबान्धवोद्धर्त्ता ॥३६७ (६६०)
कृष्णानन्दपुरीश्वरः कल्पितनागकेशराकल्पः ।
श्रीवासुदेवभर्त्ता गायन गोविन्ददाससंत्राता ॥३६८ (६६३)
द्विजहरिदासकृपालुस्तीर्थजगन्नाथपावनो वीरः ।
त्यक्तमृगाजिनवासः श्रीमद्ब्रह्मानन्दभारतीशः ॥३६९ (६६६)
मुकुन्दकविचन्द्रेशः सच्चिदानन्दबान्धवः ।
गोपालदाससंत्राता गोपालाचार्य्यसत्पतिः ॥३७० (६७०)
कमलाकान्तविश्वासशिक्षादानस्फुरन्मनाः ।
सर्वसंकल्पदाता च सत्यसंकल्पनामधृक् ॥३७१ (६७३)
सत्यसारः सत्यतनुः सत्यवाक् सत्यभक्तिदः ।
सर्वसहः सुनियमः स्वयंकामः स्वयंमधुः ॥३७२ (६८१)
भवव्याधिहरः साक्षाज्ज्ञानशुद्ध-चिकित्सकः ।
कृतत्रिरात्रबिश्राम-दासमाधवलालनः ॥३७३ (६८४)

गृहीतपूजा–सत्कारविख्यातमधुसूदनः ।
अशेषमाधुरीहृद्य–गद्यपद्यविशारदः ॥३७४ (६८६)
अध्यात्मविद्या-दुर्बोधो यमदुर्गमपद्धतिः ।
शमदुर्दर्शपादाब्जः शान्ता शान्तमनोरथः ॥३७५ (६९०)
धर्मकर्मपथातीत आत्मज्ञान–विनिस्पृहः ।
पादसेवारसाधीन–गुणकीर्त्तनलालसः ॥३७६ (६९३)
स्नेहसद्भक्तिसुलभतरुणारुणसत्पदः ।
आत्मविद्यापराजस्रनिजसेवनवोधकः ॥३७७ (६९५)
शुद्धसत्त्वभक्तिदाता भक्तिभुक् भक्तिपालकः ।
भक्तिसेवातिसुलभ-कोटीजन्माघनाशनः ॥३७८ (७००)
नामकोटीधनक्रीतो ममेति व्रततोषितः ।
निजनामरवाहूत निजदासगृहाश्रयः ॥३७९ (७०३)
शुद्धवेशः सर्ववर्णप्रियो भक्तान्नभोजकः ।
भक्तचित्तानुशायी च भक्तपालनतत्परः ॥३८० (७०८)
भक्तचित्तैकवसति र्भक्तमङ्गलवर्द्धनः ।
सम्बोधनपदाधीनः सर्वशास्त्रार्थगोपकः ॥३८१ (७१२)
गीताभागवतव्याख्या-भक्तिमात्रप्रकाशकः ।
असंख्ययोगविश्रान्तभक्तियोगप्रकाशकृत् ॥३८२ (७१४)
अध्यात्मज्ञानसन्तप्त-कीर्त्तनामृतशान्तिदः ।
प्रधानभक्तिवोधार्थ प्रेमभक्तिप्रकाशकः ॥३८३ (७१६)
निजभक्तिसुखास्वाद–विज्ञानो निजभक्तिमान् ।
श्रीकृष्णः कृष्णचैतन्यः स्वर्णाचललसद्वपुः ॥३८४ (७२१)
युगानुरूपवेदोक्त–गौरदेहप्रकाशकः ।
रघुनन्दनमाधुर्य्य-प्रेमधैर्य्यसुखावहः ॥३८५ (७२३)
गुरुभक्तो गभीरात्मा सुशीलो मातृवत्सलः ।
दयालुर्दुर्गतत्राणो वशी त्यागी कविः सुधीः ॥३८६ (७३३)

द्विजदामोदरप्राणनाथो नारायणेश्वरः ।
आत्मप्रकाशावेशोत्थ-कालोऽहमितिवाङ्मयः ॥३८७ (७३६)
सिंहग्रीवातिमधुर सन्न्यासावेशवीक्षणः ।
नरसिंहावेशमाद्यत्करालमधुरोद्यमः ॥३८८ (७३८)
निजलोकदयागभीरधीः परमानन्दपुरी-परायणः ।
निजकिंकरशंकरद्विज-प्रणयस्नेहदयामयः प्रभुः ॥३८९ (७४२)
काशीमिश्राश्रमप्रीतः काशीमिश्रात्मशक्तिदः ।
नीलाचलपतिप्राणो नीलाचलपतिः स्वयम् ॥३९० (७४६)
जगन्नाथान्नसंभोग-संसूचिततदादरः ।
प्रतापरुद्रसंत्राता गौडसत्कीर्त्तिदुन्दुभिः ॥३९१ (७४९)
शिवानन्दप्रणयदः प्रेमसद्भक्तिलम्पटः ।
मुकुन्ददाससुप्रीतो लोकत्राता महाबलः ॥३९२ (७५४)
समुद्रकूलसञ्चारीजनसञ्चारभीतवत् ।
अशेषजगतीज्ञातो निजगोपनतत्परः ॥३९३ (७५८)
सत्यानन्दः जितक्रोधः कोटीब्रह्माण्डनायकः ।
अन्तर्यामी कृती दान्तो लोकप्रीणनपण्डितः ॥३९४ (७६५)
ओड्रदेशजनानन्दः सर्वसुन्दरसुन्दरः ।
निजप्रेमभरोन्माद-विस्मृतात्मा जगन्मयः ॥३९५ (७६९)
अशेषगुणसम्पन्नः शूरसिंहपराक्रमः ।
लघुभोजी शीघ्रभोजी लघुगामी सतांगतिः ॥३९६ (७७५)
पद्मरागसुधासार-सुखसारतनुप्रभः ।
शैशवोचितमाधुर्य्यभक्तप्रणयवर्द्धनः ॥३९७ (७७७)
जगायि-प्रेमदाता च माधायि-त्राणतत्परः ।
सर्ववर्णाश्रमप्रीतो वाचोयुक्तिविशारदः ॥३९८ (७८१)
जयदेवप्रीतिदाता प्रीतिदः करुणानिधिः ।
संसारगरलाम्भोधौ पीयूषाम्बुधिसृग्यशः ॥३९९ (७८५)

स्वभक्तदोषगोप्ता च भक्ताभक्तेषु भक्तिमान् ।
पद्मधृक् शंखभृच्चक्री गदावान् हेमवेणुवान् ॥४०० (७६२)
धनुर्धरो मल्लभुजो मुक्ताहारविभूषणः ।
पुरन्दराचार्य्यमेवादत्त-स्वपदपंकजः ॥४०१ (७६६)
शास्त्रमूर्त्तिर्महातेजा दयाप्राकृतचेष्टितः ।
माधवाचार्य्यसंत्राता सिंहेश्वरदयापरः ॥४०२ (८०१)
कृपानयनपातार्ह-द्विजश्रीरघुनन्दनः ।
सेनवंशशिवानन्दप्रियः संसारमङ्गलः ॥४०३ (८०४)
गोपीनाथप्रतिष्ठाता गोपीनाथशुभप्रदः ।
गोपीभक्तिग्राहयिता त्वालमन्दारपाठकः ॥४०४ (८०८)
पूर्वावतार-स्वयशः कथानिक्षिप्तकालिमा ।
तपनाचार्य्य-सुखदश्चिरञ्जीवदयापरः ॥४०५ (८११)
दामोदरप्रेमदाता सदाचारविभूषणः ।
गौरीनाथप्रियः शान्तः कृपात्तयदुनन्दनः ॥४०६ (८१६)
रासनिर्वाहसंक्षोभ-प्रकाशीकृतषड्भगः ।
सुगीतो नर्त्तकगुरुः सर्वसंगीतसारवित् ॥४०७ (८२०)
मनोहारी चमत्कारी रूपो मन्मथमन्मथः ।
दीनानुरक्तः सर्वेशो दाता मेघगभीरवाक् ॥४०८ (८२६)
काव्यशास्त्रविनोदी च नाट्यालंकारपण्डितः ।
पुराणो सत्कथाश्रोता गीतापाठपरायणः ॥४०९ (८३०)
ज्ञानदाता ज्ञानसारो ज्ञानीन्द्रो योगदुर्ल्लभः ।
योगीन्द्रो यज्ञपादश्च कोटिब्रह्माण्डविश्रुतः ॥४१० (८३७)
निर्वाण तत्पराणस्य विभूति-ब्रह्मदायकः ।
हरिदासद्विजत्राता शिशुगोपालकौतुकी ॥४११ (८४०)
आपच्छत-समुद्धर्ता भवशोक-सहस्रहा ।
तीर्थकोटीसमाख्यानो जगन्नाथविनोदकृत् ॥४१२ (८४४)

जगन्नाथजनप्रीतो जगन्नाथप्रसादद: ।
जगन्नाथपरो विष्णु र्महापतितपावनः ॥४१३ (८४६)
जितकामो जितक्रोधो ब्रह्माण्डप्रेमभाण्डकृत् ।
प्रेमदण्डः प्रेमदानो द्विभुजोऽथ चतुर्भुजः ॥४१४ (८५६)
भक्तरक्षाविधानार्थ-क्षतबाहुसहस्रभृत् ।
सीतास्नेहपर रामस्त्रेता-भाग्यवती-प्रियः ॥४१५ (८५६)
रामानन्दस्नेहपरः कमलाकान्तवत्सलः ।
प्रेमामृतघटव्याज-सूत्रनद्धकरंगभृत् ॥४१६ (८६२)
सनातनप्रियस्वामी रूपप्रेमरतिप्रदः ।
अनूपमप्रियः कृष्णदासत्राता रघुप्रियः ॥४१७ (८७६)
गरुडावधूतशुद्धप्रकार-भजनाविरक्तिसुखदाता ।
रघुनाथमिश्रसेवावश्यो भक्तानतावत्राता ॥४१८ (८७०)
गोपालपण्डितानन्दो रामदासप्रियः शुचिः ।
नाशिताशेषदुर्वोधप्रेमधारासुदर्शनः ॥४१६ (८७४)
कलौ तु स्वर्णवर्णाभः सत्ये पाण्डुरविग्रहः ।
द्वापरेऽञ्जनपुञ्जाभस्त्रेतायामरुणद्युतिः ॥४२० (८७८)
दशाननशिरश्छेत्ता दंष्ट्रोद्धृतवसुन्धरः ।
क्षत्रवलोच्छेत्ता वेदोद्धारपरायणः ॥४२१ (८८०)
यमुनाकर्षणावली लीलाधृतधराधरः ।
कलिदैत्यच्छलकरः प्रल्हादप्रीतिसादरः ॥४२२ (८८६)
म्लेच्छदण्डकरक्रीडो हिंसायज्ञविनिन्दकः ।
पट्टगोपीनाथवसुच्छेदकाराहरस्मृतिः ॥४२३ (८८६)
श्रीनाथमिश्रकरुणो नानाकायधरः परः ।
पण्मासग्राहितस्वाख्यरामानन्दस्वपादद: ॥४२४ (८६३)
धन्योपास्यपदाम्भोजो धन्यलब्धकृपालवः ।
स्वेच्छाप्रवर्त्तिताशेषनिजभक्तमनोरथः ॥

वन्धुप्रियो देवबन्धु र्लोकातीतवरप्रदः ॥४२५ (८६६)
प्रेमसम्पत्ति-विदलित-निजलोकभूरिभयशोकः ।
गंगाभक्तिवशोद्धृत-धन्यनवद्वीपवृद्धशिशुदारः ॥४२६ (६०१)
लोकातीतः रसस्रष्टा लोकातीतसुदुःखहा ।
लोकातीतरसस्वामी भावसंसिग्धभक्तिदः ॥४२७ (६०५)
सर्वलोकसुखस्तम्भः सर्वधर्मसुखोदयः ।
सर्वाश्रमप्रार्थ्यफलश्चतुर्वर्गफलप्रदः ॥४२८ (६०६)
तीर्थीकृताशेषतीर्थः स्वजनानन्दवर्द्धनः ।
तीर्थगामी तीर्थभक्तो निजनाम्नावकम्पनः ॥४२६ (६१४)
श्रीरङ्गनाथदर्शी हर्षाकलितत्रिमल्लनाथश्रीः ।
श्रद्धापरार्द्धवीक्षित-निरवधिलोकप्रसादधनदाता ॥४३० (६१७)
प्रद्युम्नानुग्रहकरः शुभानन्दरसप्रदः ।
महेशपण्डितस्वामी श्रीमदीशानपालकः ॥४३१ (६२१)
स्निग्धमाधुर्य्यकरुणः कृष्णदासान्नभोजकः ।
कल्याणीदत्तकल्याणः शिवपूजापरायणः ॥४३२ (६२५)
कीर्त्तनानन्दवैदग्ध्यदाता नादहृतस्मृतिः ।
तुलसीसेवनपरस्तुलसीमूलमोचकः ॥४३३ (६२६)
तुलसीपूजनपरस्तुलसीप्रणतप्रियः ।
सन्न्यासीमानदः सर्वपूजकः सर्वपूजितः ॥४३४ (६३५)
मिश्रश्रीनिधिसुखदः श्रीयुक्तभगवान्-मिश्रसंत्राता ।
श्रीवासप्रियदयितो गोपीकान्तप्रियो धीमान् ॥४३५ (६४०)
सद्वैद्यश्रीहृदयानन्द-कलाहृत्कृपातकारी ।
कमलनयनसुखदाता कमलाकान्तप्रियप्राणः ॥४३६ (६४३)
गोपीनाथविनोदो निजमातृविलास-सुखवसतिः ।
हरिदासकीर्त्तनसुखी अद्वैताचार्य्यमानन-प्रणयी ॥
अम्बागौरवपूजनचतुरो गुरुमानपूजितः श्रीमान् ॥४३७ (६५०)

अद्वैतपूजको धीमान् सर्वमानसुरञ्जकः ।
सुबुद्धिमिश्रसुप्रीतो मधुसूदनवत्सलः ॥४३८ (६५५)
सप्तधैकत्र सम्भूत-तमालतरुमोक्तकृत् ।
मुरारिगुप्तवसिता भक्तभोजनकौतुकी ॥४३६ (६५७)
गदाधरप्रेमभास्वद् राधारभसमोदकृत् ।
अनेकद्विज-दिव्यान्नपानभोजनतत्परः ॥४४० (६५६)
प्रेमावासः प्रेमतत्त्वं प्रेमविस्तारकारणः ।
प्रेमवारिधिपूर्णेन्दुः प्रेमनामपरायणः ।।४४१ (६६४)
प्रेमानुरागभूस्नेहसेव्यमानपदाम्बुजः ।
प्रेमप्रीतिपरानन्दसन्दोहस्तत्त्वभूर्विभुः ॥४४२ (६६८)
अष्टभक्तिप्रसूर्धीरो नवभक्तिविनोदकृत् ।
एकभक्तितनुर्धन्य एकभक्तिविहारकृत् ॥४४३ (६७४)
लीलातनुः केलितनु भक्तिभावकलातनुः ।
श्रीमत्तीर्थतनुर्धर्मतनुः कर्मतनुर्महान् ॥४४४ (६८१)
सर्वसम्पत्तनुः सर्वरससारतनुः प्रभुः ।
नामतनु रूपतनुः संगीततनुरच्युतः ॥४४५ (६८८)
शान्ततनु वेदतनुः स्वभक्तेच्छातनुः प्रियः ।
भगवान् भक्तिसन्दानो भगवद्भक्तिरूपधृक् ॥४४६ (६६५)
श्रीमन्नरहरिप्राणः श्रीमन्नरहरिप्रियः ।
सर्वावतारकरुणा-परिपाकदयापरः ॥४४७ (६६८)
दुर्गतम्लेच्छचण्डाल-पतिताधमतारकः ।
द्विजवंशाम्बुजश्रेणी-प्रकाशैकदिवाकरः ॥४ ८ (१०००)
इति स्तुत्वा पपाताग्रे दण्डवद्धरणीतले ।
वाष्परुद्धगलः प्रेम्णा प्रननाम पुनः पुनः ॥४४६
पूर्ववृत्त-निजदाससुस्तवैरित्थमेव परितोषितो विभुः ।
हासचारुगिरमाह वत्स ते वाञ्छितं रचय सत्वरं वरम् ॥४५०

श्रीतपनाचार्य्य उवाच—

इमं परं वरं याचे भक्तिरस्तु त्वयि स्थिरा ।
सभया सानुरागा च सस्नेहा प्रेमलक्षणा ॥४५१
नापरै में वरैः कार्य्यं भक्तिव्याघातकारकैः ।
सेवा तव पदाम्भोजे मुखे कीर्त्तिर्नमोऽस्तु ते ॥४५२
अकिञ्चनस्यापि विभो ! मतिरेतादृशी मम ।
वरैरुत्थापिता किम्वा न करिष्यत्यमङ्गलम् ॥४५३
ममाल्पबुद्धेरितिभीतिरुद्भटा वरावसाने मम भावि किंवा ।
कदाचिदानन्दसमुद्रसम्पद-पदारविन्दं विसृजेन्मनो मे ॥४५४
अपराधशतं. कृत्वा पुनः पुनरलज्जधीः ।
पुनः पुनः पताम्यग्रे तेन नाथ ! विभेम्यहम् ॥४५५

श्रीकृष्णचैतन्य उवाच—

ममेति यस्य सम्बन्धे मयोक्तं सुप्रियं वचः ।
तस्य किं भवबन्धोऽस्ति दावाग्ने र्वाम्बुधे र्भयम् ॥४५६
ममेत्युक्त्वा यदा दण्डं करोमि स्वस्य दोषतः ।
तदा को मे समर्थोऽस्ति भजनेऽल्पमतिर्जनः ॥४५७
यदापराधं गृन्हामि स्वस्य दण्डं करोम्यहम् ।
दंष्ट्राग्रै र्वसुधा-मेषा चूर्णीकर्त्तुं न शक्यते ॥४५८
कालोऽस्मि लोकक्षयकृत् प्रवृद्धो
दुष्टान् समाहर्त्तुमिह प्रवृत्तः ।
स्वीयान् समुद्धर्त्तुमशेषदुष्टान्
तावच्च वत्सस्य भयं कुतस्ते ॥ ४५९
इत्युक्त्वा करुणासिन्धुर्दयासंरम्भविह्वलः ।
संगोपयन्निवात्मानं पुनर्वचनमब्रवीत् ॥ ४६०
जगन्नाथप्रभावेन किं न कर्त्तुं जनः प्रभुः ।
श्रीनीलाचलचन्द्रोऽयं तव क्षेमं करिष्यति ॥ ४६१

वर्षे वर्षे त्वमेवात्र द्रक्ष्यसि तं सबान्धवः।
न कुत्रापि भयं कार्य्यमपि संसारसागरात् ॥४६२॥
सेवाभिः कीर्त्तनैश्चापि साधुसंगैश्च निर्मला।
सानुराग-भय-स्नेहाद्भक्तिः कृष्णे भविष्यति ॥४६३

श्रीहरिदास उवाच—
ततः किमभवद्वृत्तं कथय त्वरितं मम।
त्वत्कथामृतपानेन सुखी जातोऽस्मि निर्भयम् ॥४६४

श्रीनरहरिदास उवाच—
पुनश्च चैतन्यमहाप्रभुः स्वयं स्वभावसाधु द्विज एव निर्मलः।
प्रेमाख्य भावीति वचो निगद्य करैस्तदङ्गं सकलं समास्पृशत्॥४६५
सद्यः करस्पर्शमहोदयैर्द्विजोऽप्यतीवमुग्धः सकलेन्द्रियैरभूत्।
विकारवान् प्रेमरसातिविह्वलः सकम्प आनन्दसुधारसालसः ॥४६६
किमित किमिति हर्षाद्विस्मयादार्त्तचेताः
स्वविषयमपि नैव ज्ञातुमीशः स आसीत्।
पुनरपि मुखपद्मं भूरियत्नात् कथञ्चिद्
गलदुरुजलधारैर्नेत्रपद्मैर्ददर्श ॥ ४६७
पीत्वा पीत्वाथ तद्रूपं नयनै र्निमिषोज्झितैः।
जड़ एवाभवद्दीनः किमेतदितिविह्वलः ॥४६८
क्षणं पश्यन् क्षणं धावन् क्षणं तिष्ठन् क्षणं रुदन्।
क्षणं हसन् क्षणं जल्पन् क्षणं मूर्च्छन् क्षणं श्वसन् ॥४६९
आनन्द-गद्गदः क्वापि कम्परुद्धगलः क्वचित्।
इति कर्त्तव्यतामूढ़ः पतन्नासीत् पदे पदे ॥४७०
धृतिमान् पुनरुत्थाय कृपां संस्मरणाद् विभोः।
इत्युत्कण्ठातिविकलः प्राह सप्रश्रयं वचः ॥४७१
किं मया चरितं पुण्यं दत्तं किंवार्हते धनम्।
अकस्मात्करुणा जाता निर्गुणे मयि किं तव ॥४७२

इत्युक्तः करुणासिन्धुः श्रीचैतन्यमहाप्रभुः ।
प्राह श्रीतपनाचार्य्य ! वं ममासीति सस्मितम् ॥४७३
यत्र तत्र स्थितस्यापि तव नाम न विद्यते ।
इत्युक्त्वा सदयं तस्मै मालां कंठगतां ददौ ॥४७४
इतीत्थं सदयं देवः स्मित्वा स्मित्वा निजं जनम् ।
श्रीगोविन्दभुजालम्बी काशीमिश्राश्रमं ययौ ॥४७५
सोऽपि प्रेमजडोन्मत्तः पथि विस्मापयन् जनान् ।
स्ववासं प्रययौ धन्यस्तोषयन् निजसंगिनः ॥४७६
एवं प्रसादमासाद्य द्विजो वैदेशिकः प्रभोः ।
स्वदेशं गतवान् भ्रातस्त्वं तथैव समाचर ॥४७७
इति श्रुत्वा वचस्तस्य विशुद्धहृदयः सुधीः ।
हरिदासोऽपि चैतन्यचन्द्रं द्रष्टुं जगामह ॥४७८
नीलाचलपतिर्यस्मिन्नोड्रदेशे महाप्रभुः ।
तेनैव वर्त्मना प्रातरनिवेद्येव निर्ययौ ॥४७९
गत्वा च सर्वभावेन भेदबुद्धि-पराङ्मुखः ।
नीलाचलपतौ कृष्णचैतन्ये च सुखीस्थितः ॥४८०
विशेषतश्च श्रीकृष्णचैतन्यचरणाश्रयः ।
तत्पादसङ्गिणां सङ्गं चकार चतुरो द्विजः ॥४८१
तत्कथाचरितैर्लीला-विलासैः प्रियभाषितैः ।
कारुण्यैरतिविश्वस्तो न तत्याज पदान्तिकम् ॥४८२
अल्पेनैव हि कालेन श्रीचैतन्यमहाप्रभुः ।
स्वपाददास्यं प्रददौ हरिदासाय कौतुकी ॥४८३

इति श्रीमद्गौराङ्गचरणारविन्दकृपामकरन्दलहरी-विलास-समुदित रसना कण्डूति विकशितं श्रीमन्नरहरिदासमुखोदितं

श्रीकृष्णचैतन्यचन्द्रसहस्रनामस्तोत्रम्

सम्पूर्णोऽयं ग्रन्थः ॥

श्रीराधायै नमः

श्रीमन्महाप्रभुकृष्णचैतन्यचंद्रविरचितं
श्रीराधाष्टोत्तरशतनामस्तोत्रम्

श्रीमद्राधा-रसमयी रसज्ञा रसिका तथा ।
रासेश्वरी रसभक्ती रसपूर्णा रसप्रदा ॥ १ ॥
रङ्गिणी रसलुब्धा च रासमण्डलकारिणी ।
रसबिलासिनी राधा राधिका रसपूर्णदा ॥ २ ॥
रामारत्ना रत्नमयी रत्नमाला सुशोभना ।
रक्तोष्ठी रक्तनयना रक्तोत्पलबिधारिणी ॥ ३ ॥
रमणी रामणी गोपी वृन्दाबनविलासिनी ।
नानारत्ना विचित्राङ्गी नानासुखमयी सदा ॥ ४ ॥
संसारपारतरणी बेणुगीतबिनोदिनी ।
कृष्णप्रिया कृष्णमयी कृष्णध्यानपरायणी ॥ ५ ॥
सदानन्दा क्षीणमध्वा कृष्णा कृष्णालया शुभा ।
चन्द्रावली चन्द्रमुखी चन्द्रा च कृष्णवल्लभा ॥ ६ ॥
वृन्दावनेश्वरी देवी कृष्णारंगी परागतिः ।
ध्यानातीता ध्यानगम्या सदाकृष्णकुतूहली ॥ ७ ॥
प्रेममयी प्रेमरूपा प्रेमा प्रेमविनोदिनी ।
कृष्णप्रिया सदानन्दो गोपीमण्डलवासिनी ॥ ८ ॥
सुन्दराङ्गी च स्वर्णाभा नीलपट्टविधारिणी ।
कृष्णानुरागिणी चैव कृष्णप्रेमसुलक्षणा ॥ ९ ॥
निगूढ़रससारङ्गी मृगाक्षी मृगलोचना ।
अशेषगुणपारा च कृष्णप्राणेश्वरीसीमा ॥ १० ॥
रासमण्डलमध्यस्था कृष्णरङ्गी सदा शुचिः ।
ब्रजेश्वरी ब्रजरूपा ब्रजभूमिसुखप्रदा ॥ ११ ॥

रसोल्लासा मदोन्मत्ता ललिता रससुन्दरी ।
सर्व्वगोपीमयी नित्या नानाशास्त्रविशारदा ॥ १२ ॥
कामेश्वरी कामरूपा सदा कृष्णपरायणा ।
पराशक्तिस्वरूपा च सृष्टि-स्थिति-विनाशिनी ॥ १३ ॥
सौम्या सौम्यमयी राधा राधिका सर्व्वकामदा ।
गंगा च तुलसी चैव यमुना च सरस्वती ॥ १४ ॥
भोगवती भगवती भगवच्चित्तरूपिणी ।
प्रेमभक्ति-सदासङ्गी प्रेमानन्दविलासिनी ॥ १५ ॥
सदानन्दमयी नित्या नित्यधर्म्मपरायणी ।
त्रैलोक्याकर्षणी आद्या सुन्दरी कृष्णरूपिणी ॥ १६ ॥
शतमष्टोत्तरं नाम यः पठेत् प्रयतः शुचिः ।
प्रातःकाले च मध्यान्हे सन्ध्यायां मध्यरात्रिके ।
यत्र तत्र भवेत्तस्य कृष्णः प्रेमयुतो भवेत् ॥ १७ ।

इतिश्रीमत्‌कृष्णचैतन्यचन्द्रेण विरचितं
श्रीराधाष्टोत्तरशतनामस्तोत्रं
सम्पूर्णम्

श्रीश्रीगौरांगप्रत्यङ्गवर्णनाख्यस्तवराजः ॥

अथ स्तोत्रं प्रवक्ष्यामि प्रत्यङ्गवर्णनं प्रभोः ।
त्रिकालपठनादेव प्रेमभक्तिं लभेन्नरः ॥ १
कश्चित् श्रीकृष्णचैतन्यस्मरणाकुलमानसः ।
पुलकांचितसर्व्वाङ्गः सकम्पाश्रुविलोचनः ॥ २
कथञ्चित्स्थैर्य्यमालम्ब्य प्रणम्य गुरुमादरात् ।
स्तोतुमारब्धवान् भक्त्या द्विजचन्द्रं महाप्रभुम् ॥ ३
तप्तहेमद्युतिं वन्दे कलिकृष्णं जगद्गुरुम् ।
चारुदीर्घतनुं श्रीमच्छचीहृदयनन्दनम् ॥ ४
लसन्मुक्तालता-नद्ध-चारु-कुञ्चितकुन्तलम् ।
शिखण्डाङ्कितगन्धाढ्यं पुष्पगुच्छावतंसकम् ॥ ५

अनन्तर हम महाप्रभु के प्रत्यंगवर्णन नामक स्तोत्र का वर्णन करते हैं, जिसका त्रिकाल पठन करने पर मनुष्य प्रेमभक्ति का लाभ करता है ॥ १ ॥

श्रीकृष्णचैतन्य महाप्रभु के स्मरण में व्याकुलमना, सर्व्वाङ्ग से पुलकायमान, कम्पयुक्त तथा अश्रुनेत्र कोई महानुभाव किसी प्रकार से स्थिरता को धारण कर आदर के साथ गुरु को प्रणाम करता हुआ भक्ति पूर्व्वक द्विजचन्द्र उन महाप्रभु की स्तुति करने के लिये प्रारम्भ करने लगा ॥ २-३ ॥

चतुर्थ श्लोक से लेकर पञ्चत्रिंश (३५) श्लोक पर्य्यन्त वन्दना-क्रिया के कर्म्मभूत महाप्रभु गौरांगदेव हैं। उनका एक ही क्रिया के द्वारा एक ही साथ वर्णन है। उन्हें कहते हैं-हम तपायमान सुवर्ण की भाँति कान्ति वाले, कलियुग में साक्षात् श्रीकृष्ण स्वरूप, जगद्गुरु, मनोहर दीर्घ शरीर वाले, श्रीमती शचीदेवी के हृदय आनन्दन ॥ ४ ॥

अर्द्ध चन्द्रोल्लसद्भालकस्तुरी—तिलकाङ्कितम् ।
भङ्गुरभ्रूलताकेलि—जित—कामशरासनम् ॥ ६
प्रेमप्रवाहमधुररक्तोत्पल-विलोचनम् ।
तिलप्रसून-सुस्निग्धनूतनायतनासिकम् ॥ ७
श्रीगण्डमण्डलोल्लासि-रत्नकुण्डलमण्डितम् ।
सव्यकर्णसुविन्यस्त—स्फुरच्चारु-शिखण्डकम् ॥ ८
मधुरस्नेह-सुस्निग्ध-प्रारक्ताधर-पल्लवम् ।
इषद्दन्तुरितस्निग्धस्फुरन्मुक्तारदोज्ज्वलम् ॥ ९
सप्रेममधुरालाप वशीकृतजगज्जनम् ।
त्रिकोण-चिबुकं कोटी शारदेन्दु-प्रभाननम् ॥ १०
सिंहग्रीवं महामत्त-द्विरदोल्लासि-कन्धरम् ।
आरक्त रेखात्रययुक्-कम्बुकण्ठमनोहरम् ॥ ११

विराजमान मुक्तालता से बँधा हुआ मनोहर कुञ्चित केशवाले, चन्दन से चर्चित, मनोहर गन्धद्रव्यों से युक्त, अवतंस (शिरोभूषण) में पुष्पगुच्छ की धारण करने वाले ॥ ५ ॥

अर्द्ध चन्द्र की भाँति शोभायमान भालदेश में कस्तूरी-तिलक से चित्रित, भङ्गिम भ्रूलता की क्रीड़ा से कन्दर्प के शरासन को जीतने वाले ॥ ६ ॥

प्रेम धाराओं से मधुर तथा रक्तकमल की भाँति नयन वाले, तिल-पुष्प की भाँति सुस्निग्ध-नवनवायमान-लम्बे नासिक वाले ॥ ७ ॥

गण्डमण्डल में उल्लसित रत्नकुण्डलों से मण्डित, वामकर्ण में स्पर्श प्राप्त मनोहर मयूरपुच्छ से शोभायमान ॥ ८ ॥

मधुर, स्नेह से सुस्निग्ध, रक्तायमान अधर पल्लव वाले, कुछ दन्तुरित स्निग्ध-मुक्ता की भाँति शोभायमान दान्तों से उज्ज्वल ॥९॥

प्रेम के साथ मधुरालाप के द्वारा जगजनों को वश में लाने वाले, त्रिकोणाकार चिबुक वाले, कोटि शरच्चन्द्र की भाँति मुखवाले ॥ १०

मुक्ताप्रवाल-कलित-हारोज्ज्वलित-वक्षसम् ।
कङ्कणाङ्गद-विद्योति-जानुलम्बि-भुजद्वयम् ॥ १२
यव-चक्राङ्किताऽरक्त-श्रीमत्पाणितलोज्ज्वलम् ।
स्वर्णमुद्रालसच्छ्रीमद्द्विमध्याङ्गुलि-पल्लवम् ॥ १३
चन्दनागुरुसुस्निग्धं पुलकावलीचर्च्चितम् ।
चारुनाभिलसन्मध्यं सिंहमध्य-कृशोदरम् ॥ १४
विचित्र चित्रवसन-मध्य-बद्धोल्लसत्कटिम् ।
सुचारुनूपुरोल्लासि-कूजच्चरण-पल्लवम् ॥ १५
शरच्चन्द्रप्रतीकाश-नखराजत्पदाङ्गुलिम् ।
अङ्कुशध्वज-बज्राब्ज-बिलसच्चरणाम्बुजम् ॥ १६

सिंहग्रीव, महामत्त हस्ति-शुंड की भाँति मनोहर कन्धेवाले, ईषत् रक्तायमान रेखात्रय से युक्त कम्बुकंठ से मनोहर ॥ ११ ॥

मुक्ता प्रवालों से बनी हुईं मालाओं से उज्ज्वल वक्षवाले, कंकण-बाजूबंद से शोभायमान तथा आजानुलम्बि दोनों भुजवाले ॥ १२ ॥

दोनों मध्य अंगुलि पल्लवों में स्वर्णमुद्रा का धारण करने वाले, यव-चक्रादि चिन्ह से अङ्कित, रक्तायमान श्रीहस्ततल से उज्वल ॥१३॥

चन्दन-अगुरु से सुस्निग्ध, पुलकावली से चर्च्चित, मध्यदेश में मनोहर नाभिकमल से शोभायमान, सिंह के मध्यदेश की भाँति क्षीण उदर वाले ॥ १४ ॥

मध्यभाग में विचित्र चित्रवसन से बद्ध उल्लसित कटि वाले, मनोहर नूपुरों से उल्लास प्राप्त, शब्दायमान चरणपल्लव बाले ॥१५॥

पदाङ्गुलियों के शरच्चन्द्र की भाँति जाज्वलित नखों से शोभायमान, अङ्कुश-ध्वज-बज्र कमलादि चिन्हों से विलसित चरण कमल वाले ॥ १६ ॥

कोटीसूर्य्यप्रतीकाश-कोटीन्दु-ललितद्युतिम् ।
कोटिकन्दर्पलावण्य-केलिलीला-मनोहरम् ॥ १७
साक्षाल्लीलातनुं केलितनुं श्रृङ्गार-बिग्रहम् ।
क्वचिद्भावकलामूर्त्ति-प्रस्फुरत् प्रेमविग्रहम् ॥ १८
शचीजठररत्नाब्धिसमुद्भूतसुधानिधिम् ।
नामात्मकं नामतनुं परमानन्दविग्रहम् ॥ १९
भक्त्यात्मकं भक्तितनुं भक्त्याचार-बिहारिणम् ।
अशोषकेलिलावण्य-लीलाताण्डवपण्डितम् ॥ २०
अशेषजगदानन्द-कन्दमद्भुत-मङ्गलम् ।
स्फुरद्रासरसावेश-मदालस-विलोचनम् ॥ २१
क्वचिद्भक्तजनैर्दिव्य-माल्य-गन्धानुलेपनैः ।
वेष्टितं रससङ्गीतं गायद्भिरसलालसम् ॥ २२

कोटिसूर्य्य की भाँति प्रकाशमान, कोटिचन्द्रमा की भाँति मनोहर कान्ति वाले, कोटिकन्दर्प के तुल्य लावण्यशील, केलि क्रीड़ा से मनोहर ॥ १७ ॥

साक्षात् लीला-क्रीड़ा तथा श्रृङ्गार के बिग्रह, भावकला की मूर्त्ति, शोभायमान प्रेममय विग्रह ॥ १८ ॥

नाम के आत्मारूप, नाम के विग्रह, परमानन्द शरीर वाले, भक्ति के आत्मा, भक्ति के विग्रह, भक्त्याचार से विहार शील ॥ १९ ॥

समस्त केलिलावण्य तथा लीला ताण्डव के पण्डित, शचीगर्भ सागर से उद्भूत चन्द्मा स्वरूप, अशेष जगत् के आनंदकंद, अद्भुत-मङ्गल स्वरूप ॥ २० ॥

स्फूर्त्तिमान रास-रस आवेश की मत्तता से आलस नयन वाले, कहीं रस संगीत गाने वाले भक्तजनों के द्वारा दिव्यमाल्य-गंध-अनुलेपनादि ग्रहण पूर्वक परिबेष्टित, रसलालस ॥ २१-२२ ॥

क्वचिद्बाल्यरसावेश-गङ्गातीर-विहारिणम् ।
क्वचिद्गायति गायन्तं नृत्यन्तं कर-शब्दितैः ॥ २३
बदन्तं शब्दमत्युच्चैः कुर्व्वन्तं सिंहविक्रमम् ।
क्वचिदास्फोटहुङ्कार-कम्पिताशेषभूतलम् ॥ २४
सुगुप्तगोपिकाभाव-प्रकाशित-जगत्त्रयम् ।
प्रापिताशेष-पुरुष-स्त्री-स्वभावमनाकुलम् ॥ २५
निजभावरसास्वाद-विवशैकादशेन्द्रियम् ।
विदग्धनागरीभाव-कला-केलि-मनोरमम् ॥ २६
गदाधरप्रेमभाव-कलाक्रान्तमनोरथम् ।
नरहरिप्रेमरसास्वाद-विह्वल-मानसम् ॥ २७
सर्व्वभागवताहूत-कान्ताभाव-प्रकाशकम् ।
प्रेमप्रदानललित-द्विभुजं भक्तवत्सलम् ॥ २८

कहीं बाल्यरसावेश से गंगातट पर विहारशील, कहीं करताल देकर गान तथा नृत्य करने वाले ॥ २३ ॥

अत्यन्त उच्च स्वर से "कृष्ण कृष्ण" इस प्रकार बोलने वाले, सिंह की भाँति पराक्रम को दिखाने वाले, कभी हुँकार नाद के द्वारा अशेष भूतल को कम्पित करने वाले ॥ २४ ॥

परम गोपनीय गोपीभाव को त्रिजगत् में प्रकाशित करने वाले, समस्त पुरुषों को स्त्री स्वभाव (गोपीभाव) प्राप्त कराने वाले, निर्व्याकुल (अव्याहत) स्वरूप ॥ २५ ॥

अपने भाव-रस आस्वादन के द्वारा निज ग्यारह इन्द्रियों को विवश करने वाले, विदग्ध नागरी(राधा)भाव की कला क्रीड़ा से मनोहर॥२६

श्रीगदाधरपण्डित के प्रेमभाव कला में आक्रान्त मनोरथवाले, श्रीनरहरि के प्रेमरसास्वादन में विह्वल मानस ॥ २७ ॥

गुप्त रूप में स्थित कान्ताभाव के प्रकाशक, प्रेम प्रदान में मनोहर, द्विभुज, भक्तवत्सल ॥ २८ ॥

प्रेमाराध्य पदद्वन्द्वं श्रीप्रेमभक्तिमन्दिरम् ।
निजभावरसोल्लास-मुग्धीकृतजगत्त्रयम् ॥ २९
स्वनामजपसंख्याभिर्वैष्णवीकृत-भूतलम् ।
नबद्वीपजनानन्दं भूदेबजनमङ्गलम् ॥ ३० ॥
अशेषजीवसद्भाग्य-क्रम-सम्भूत-सत्फलम् ।
भयानुरागसुस्नेह-भक्तिगम्य-पदाम्बुजम् ॥ ३१
नटराजशिरोरत्नं श्रीनागरशिरोमणिम् ।
अशेष-रसिक-स्फूर्य्यन्मौलिभूषण-भूषणम् ॥ ३२
रसिकानुगत-स्निग्ध-बदनाब्जमधुव्रतम् ।
श्रीमद्द्विजकुलोत्तंसं नवद्वीपविभूषणम् ॥ ३३
प्रेमभक्तिरसोन्मत्ताद्वैत-सेब्य-पदाम्बुजम् ।
नित्यानन्दप्रियतमं सर्ब्बभक्तमनोरथम् ॥ ३४

प्रेम से आराधित दोनों चरण कमल वाले, श्रीप्रेभभक्ति के मंदिर, अपने भावरस के उल्लास से त्रिजगत् को मुग्ध करने वाले ॥ २९ ॥

अपने नाम के संख्यापूर्व्वक जप के द्वारा समस्त पृथिवी को वैष्णव कर देने वाले, नबद्वीप वासियों के आनंददाता, ब्राह्मण-जनों के मङ्गल स्वरूप ॥ ३० ॥

अशेष जीवों के सद्भाग्य क्रम से फलरूप में प्राकट्य, भय-अनु-राग स्नेहमय भक्ति के द्वारा गम्य चरण-कमल वाले ॥ ३१ ॥

नटराजों के शिरोभूषण-रत्नस्वरूप, नागरशिखामणि, समस्त रसिकों के मस्तक भूषणों के भूषण ॥ ३२ ॥

अनुगत रसिकों के स्निग्ध वदन कमल के भ्रमर रूप, द्विजवंश के उत्तंस, नवद्वीप के विभूषण ॥ ३३ ॥

प्रेम भक्तिरस से उन्मत्त श्री अद्वैतप्रभुके द्वारा सेव्य चरण कमल-वाले, श्रीनित्यानन्दप्रभु के प्रियतम, समस्तभक्तों के मनोरथ स्वरूप ॥ ३४ ॥

भक्ताराध्यं भक्तिसाध्यं भक्तरूपिणमीश्वरम् ।
श्रीनिबासादिभक्ताग्रैः स्तूयमानं मुहुर्मुहुः ।
सार्व्वभौमादिभिर्वेदशास्त्रागमविशारदैः ॥ ३५
य एवं चिन्तयेद्देवदेवेशं प्रयतोऽनिशम् ।
संस्तौति भक्तिभावेन त्रिसन्ध्यं नित्यमेव च ॥ ३६
धर्म्मार्थी लभते धर्म्मं श्रीभागवतमुत्तमम् ।
अर्थार्थी लभते चार्थं कृष्णसेवाविधौ रतिम् ॥ ३७
कामार्थी लभते कामं प्रेमभक्ति-विधानतः ।
संसारबासनामुक्तिं मोक्षार्थी विगतस्पृहः ॥ ३८
विद्यार्थी लभते विद्यां काम-संसार-कृन्तनीम् ।
काव्यार्थी कबिताशक्तिं कृष्णवर्णनशालिनीम् ॥ ३९
अपुत्रो वैष्णवं पुत्रं लभते लोकवन्धुताम् ।
आश्रयार्थी लभेच्छान्तं श्रीमद्भागवतं गुरुम् ॥ ४०

भक्ति से आराध्य, एक मात्र भक्तिगम्य, भक्तस्वरूप, ईश्वर, श्रीनिवासादि प्रमुख भक्तों के द्वारा तथा वेद-शास्त्र आगम में परम पण्डित सार्व्वभौमादि भक्तों के द्वारा बारम्बार स्तूयमान ॥ ३५ ।

श्री शचीनन्दन गौरहरि की हम वन्दना करते हैं। अब फलश्रुति कहते हैं। जो संयतचित्त होकर नित्य निरन्तर देबदेव उन गौरहरि का इस प्रकार चिन्तन करता हुआ त्रिसन्ध्या स्तुति करता है उसके फल का वर्णन करते हैं—

धर्म्मार्थी उत्तम भागवत धर्म्म का, अर्थार्थी कृष्ण सेवाविधि में रतिरूप महान अर्थ का, कामार्थी प्रेमभक्ति कामना का, मोक्षार्थी विगत स्पृह होकर संसार मोचन रूप मुक्ति का, विद्यार्थी काम संसार-च्छेदिनी पराविद्या का, काव्यार्थी श्रीकृष्ण वर्णनशालिनी कविताशक्ति का, अपुत्र लोकप्रिय बैष्णव पुत्र का तथा आश्रयार्थी शान्त भागवत गुरु का लाभ करता है। मनुष्य इसका पाठ कर श्रीमत् कृष्णचैतन्य

श्रीमच्छ्रीकृष्णचैतन्य-पदाम्बुजयुगे भृशम् ।
प्रेमानुराग-ललितां प्रेमभक्ति लभेन्नरः ॥ ४१

इति श्रीमदद्वैताचार्य्यप्रभुविरचितश्रीगौराङ्गप्रत्यङ्ग--
वर्णनाख्यस्तवराजः समाप्तः ।

महाप्रभु के चरणकमल युगल में निरन्तर प्रेमानुराग से ललित प्रेम-भक्ति को प्राप्त करता है ॥ ३६-४१ ॥

श्रीनित्यानन्दचन्द्रस्य नामद्वादशकम्

नित्यानन्दोऽवधूतेन्दुर्वसुधाप्राणवल्लभः ।
जान्हवीजीवितपतिः कृष्णप्रेमप्रदः प्रभुः ॥ १
पद्मावतीसुतः श्रीमान् शचीनन्दनपूर्व्वजः ।
भावोन्मत्तो जगत्त्राता रक्तगौरकलेवरः ॥ २
श्रीनित्यानन्दचन्द्रस्य नाम द्वादशकं शुभम् ।
य इदं प्रत्यहं प्रातः प्रत्युत्थाय पठेन्नरः ॥ ३
स क्लेशरहितो भूत्वा प्राप्नुयात्स्वमनोरथम् ।
तूर्णं चैतन्यदेवस्य करुणाभाजनं भवेत् ॥ ४

इति श्रीसार्व्वभौमभट्टाचार्य्यविरचितं
श्रीनित्यानन्दचन्दस्य नामद्वादशकं सम्पूर्णम् ॥

श्रीराधाकृष्णाभ्यां नमः ।

चैतन्यः कृष्णचैतन्यो गौराङ्गो द्विजनायकः ।
यतीनां दण्डीनां चैव न्यासिनाञ्च शिरोमणिः ॥ १
रक्ताम्बरधरः श्रीमान् नवद्वीपसुधाकरः ।
प्रेमभक्तिप्रदश्चैव श्रीशचीनन्दनस्तथा ॥ २ ॥
द्वादशैतानि नामानि त्रिसन्ध्यं यः पठेन्नरः ।
तस्य वान्छा सुसिद्धिः स्यात् भक्तिः श्रीलपदाम्बुजे ॥ ३

इतिश्रीसार्व्वभौमभट्टाचार्य्यविरचितं श्रीगौराङ्गद्वादश नाम सम्पूर्णम् ॥

श्रीश्रीवासुदेवसार्व्वभौमभट्टाचार्य्यविरचितं

श्रीचैतन्यशतकम्

प्रणम्य त्वां प्रभो गौर तव पादे शतं ब्रुवे ।
सदाशयानां साधूनां सुखार्थं मे कृपां कुरु ॥ १ ॥
श्रीराधाकृष्णयोः सेवां स्थापयित्वा गृहे गृहे ।
श्रीमत्संकीर्तने गौरो नृत्यति प्रेमविह्वलः ॥ २ ॥
जिह्वायां हरिनामसाधनमहो धाराशतं नेत्रयोः
सर्वांगे पुलकोद्गमो निरवधि स्वेदश्च विभ्राजते ।
श्रीमद्गौरहरेः प्रगल्भमधुरा भक्तिप्रदातुर्ज्जनैः
सेवा श्रीव्रजयोषितामनुगता नित्या सदा शिक्ष्यते ॥ ३ ॥
कलिमलपतितानां शोकमोहावृतानां
निजजनपतिसेवाबित्तचिन्ताकुलानाम् ।
इति समजनि गौरस्त्राणहेतुं विचिन्त्य,
प्रकटमधुरदेहो नामदाता कृपालुः ॥ ४ ॥

हे प्रभु गौराङ्ग ! मै आपके श्रीचरणों में शत शत प्रणाम कर यह कहता हूँ कि सदाशय वाले साधुओं के सुख के लिये मुझ पर कृपा कीजिये ॥ १ ॥ श्रीमान् गौरहरि आज घर घर में श्रीराधागोविन्द की सेवा की स्थापना कर तथा निज संकीर्त्तनानन्द में प्रेम विह्वल हो कर नृत्य कर रहे हैं ॥ २ ॥ उत्कट मधुरभक्ति के प्रदाता श्रीगौरहरि के निकट से लोगों ने निरन्तर व्रजरमणियों की अनुगत-नित्य सेवा की शिक्षा की ! अहो ! उनकी जिह्वा में निरन्तर हरिनाम-साधन की परिपाटी, नयनों में शत शत अश्रुओं की धाराऐं, सर्व्वाङ्ग में पुलकों का

श्रीमत्कृष्णचैतन्ये जगत्त्राणैककर्त्तरि ।
यो मूढो भक्तिहीनः स्यात्पच्यते नरके ध्रुवम् ॥ ५ ॥
यः कृष्णो राधया कुंजे विलासं कृतवान् पुरा ।
गदाधरेण संयुक्तः स गौरो वसते भुवि ॥ ६ ॥
संसारसर्पदंष्टानां मूर्छितानां कलौ युगे ।
औषधं भगवन्नाम श्रीमद्वैष्णवसेवनम् ॥ ७ ॥
विषयाविष्टमूर्खानां चित्तसंस्कारमौषधम् ।
विश्रम्भेण गुरोः सेवा वैष्णवोच्छिष्टभोजनम् ॥८।
वंदे श्रीकरुणासिन्धुं श्रीचैतन्यमहाप्रभुम् ।
कृपां कुरु जगन्नाथ ! तव दास्यं ददस्व मे ॥ ९ ॥

उद्गम तथा स्वेदावली विराजमान हैं ॥ ३ ॥ अहो ! श्रीगौरहरि ने कलिमल से पतित, शोक-मोह से आवृत, निज कुटुम्ब-पति सेवा चिन्ता में व्याकुल चित्त वाले जनों के दुःख को देखकर उनके उद्धारार्थ करुणा-वश हो मधुरविग्रह का प्रकट कर नाम धन का प्रदान किया ॥ ४ ॥ एक मात्र जगत् त्राणकारी श्रीमत्कृष्णचैतन्यदेव में जो मूढ़ भक्ति हीन है वह अवश्य नरक में पचता है ॥ ५ ॥ जिन नन्दनन्दन श्रीकृष्ण ने पहले राधिका के कुन्ज में नाना प्रकार का विलास किया है वे अब गौरांग होकर गदाधर के साथ पृथिवी पर विराजमान हैं ॥६॥ संसार रूप महान् विषधर के दंशन से मूर्च्छा प्राप्त जनोंके लिये इस कलिकाल में भगवान् का नाम तथा वैष्णवसेवन परम औषधि है ॥ ७ ॥ विषय से आविष्ट मन्दबुद्धि वाले जनों की चित्त-शुद्धि के लिये सादर गुरुसेवा तथा वैष्णव-अधरामृत का भोजन परम औषधि है ॥ ८ ॥ करुणा के सागर श्रीचैतन्य महाप्रभु की मैं वन्दना करता हूँ । हे जगत् के नाथ ! आप कृपा करके मुझे अपनी दास्यता दीजिये ॥ ९ ॥ हे नाथ ! हे महा-प्रभु ! आप दुष्टों के भी प्रेमदाता हैं इस लिये बार बार याचना करता

दास्यं मे कृपया नाथ देहि देहि महाप्रभो ।
दुष्टानां प्रेमदाताऽस्य हेतो र्याचे पुन: पुनः ॥ १० ॥
संसारसागरे मग्नं पतितं त्राहि मां प्रभो !
दीनोद्धारे समर्थस्त्वमतस्ते शरणं गतः ॥ ११ ॥
जगतां त्राणकर्त्तासि भर्त्ता दातासि सम्पदाम् ।
त्राणं कुरुष्व भो नाथ दास्यं देहि शचीसुत ॥ १२ ॥
सर्व्वेषामवताराणां पुराणैयैत् श्रुतं फलम् ।
तस्मान्मे निष्कृति र्नास्ति अतस्ते शरणं गतः ॥ १३ ॥
विचित्रमधुराक्षरश्रुतिमनोज्ञगीते मुदा,
स्वभक्तगणमण्डलीरचितमध्यगामी प्रभुः ।
मनोहरमनोहरं नटति गौरचन्द्रः स्वयं
जगत्रयविभूषणे परमधामनीलाचले ॥ १४ ॥

हूँ कि आप कृपा करके मुझे अपनी दास्यता दीजिये दीजिये ॥ १० ॥ हे प्रभो ! संसार समुद्र में मग्न, पतित मुझे रक्षा कीजिये । आप दीनोद्धार में परम समर्थ हैं इस लिये आपकी शरण में आया हूँ ॥११ आप जगत्वासियों के त्राणकारी हैं सबका भरण करने वाले हैं, विविध सम्पदों के दाता हैं । हे नाथ ! हे शचीनन्दन ! आप मेरी रक्षा कीजिये । अपनी दास्यता दीजिये ॥ १२ ॥ समस्त अवतारों की महिमा का फल जो पुराण में सुनने को मिला उससे मेरा उद्धार नहीं है इसलिये आपकी शरण में आया हूँ ॥ १३ ॥ विचित्र मधुराक्षर से श्रुति के द्वारा प्रगीत, त्रिजगत् के विभूषण स्वरूप, परम धाम श्रीनीलाचल में श्रीगौरचन्द्र निजभक्त मण्डली के मध्यगामी होकर स्वयं मनोहर से भी मनोहर नृत्य कर रहे हैं ॥ १४ ॥ सुवर्ण की भाँति गौरअंग वाले श्रीगौरहरि आज नीलाचलनाथ का अवलोकन कर आनन्द के साथ हृदय पङ्कज में जलधर श्याम के आलिंगन के लिये

विलोक्य पुरुषोत्तमं कनकगौरदेहो हरिं-
मुदा हृदयपङ्कजे जलदकान्तिमालिङ्गितुम् ।
पपात धरणीतले सकलभावसम्मूर्च्छितः
कदाचिदपि नेङ्गते परमधारिसंस्पन्दनम् ॥ १५ ॥
गौरस्य नयने धारा सगद्गदं वचो मुखे ।
पुलकाङ्कितसर्वाङ्गो भावे लुठति भूतले ॥ १६ ॥
चैतन्यचरणाम्भोजे यस्यास्ति प्रीतिरच्युता ।
वृन्दाटवीशयोस्तस्य भक्तिः स्याच्छतजन्मनि ॥ १७ ॥
यथा राधापदाम्भोजे भक्तिःस्यात् प्रेमलक्षणा ।
तथैव कृष्णचैतन्ये वर्द्धते मधुरारतिः ॥ १८
कनकमुकुरकान्तिं, चारुवक्त्रारविन्दं
मधुरमधुरहास्यं पक्वविम्बाधरोष्ठम् ।
सुवलितललितांगं कम्बुकण्ठं नटेन्द्रं
त्रिभुवनकमनीयं गौरचन्द्रं प्रपद्ये ॥ १९ ॥

दौड़े परन्तु भावाधिक्य के कारण वे मूर्च्छित होकर पृथिवी पर गिर पड़े ॥ १५ ॥ श्रीगौरहरि के नयनों से निरन्तर अश्रुधारा बह रही है, मुख से सगद्गद वचन निकलता जा रहा है । उनका सर्व्वाङ्ग भाव से पुलकायमान हो रहा है । वे भूतल पर लुण्ठित हो रहे हैं ॥ १६ ॥ श्री चैतन्य के चरणकमलों में जिसका अव्यभिचार प्रेम है उसकी बृन्दावन के नाथ श्रीराधा-गोविन्द में सौ जन्म पर्यन्त भक्ति होती है ॥ १७ ॥ श्रीराधिका के चरणकमलों में जैसे जैसे की प्रेमलक्षणा भक्ति होती है ठीक वैसे वैसे श्रीकृष्णचैतन्य में मधुरारती बढ़ती रहती है ॥ १८ ॥ हम कनकदर्पण की भाँति कातिवाले, मनोहर मुखारबिन्द वाले, मधुर से मधुर हास्यकारी, पक्क विम्बफल की तरह अधर-ओष्ठ वाले, सुवलित ललित अंग धारी, काम्बुकण्ठ, नटराज, त्रिभुवन में कमनीय गौरचन्द्र का शरण में हीं आ रहे हैं ॥१९॥ सुन्दर दीर्घविग्रह

सुदीर्घसुमनोहरं मधुरकान्तिं चन्द्राननं
प्रफुल्लकमलेक्षणं दशनपंक्तिमुक्ताफलम् ।
सपुष्पनवमञ्जरीश्रवणयुग्मसद्भूषणं
प्रदीप्तमणिकंकणं कपिलहेमगौरं भजे ॥ २०
अखिलभुवनबन्धो प्रेमसिन्धो जनेऽस्मिन्
सकलकपटपूर्णे ज्ञानहीने प्रपन्ने ।
तव चरणसरोजे देहि दास्यं प्रभोस्त्वं
पतिततरणनाम प्रादुरासीत् यतस्ते ॥ २१ ॥
ऊर्द्धीकृत्य भुजद्वयं करुणया सर्वान् जनान् भाष्यते
रे रे भागवताः हरि वद वद श्रीगौरचन्द्रः स्वयम् ।
प्रेम्णा नृत्यति हुङ्कृतिं विकुरुते हाहारवैर्व्याकुलो
भूमौ लुण्ठति मूर्च्छितः स्वहृदये हस्तौ विनिक्षिप्यति ॥२२

धारी, अत्यन्त मनोहर, मधुरकान्ति वाले, चन्द्रवदन, प्रफुल्ल कमल की भाँति नेत्र वाले, मुक्ताफल सदृश सुन्दर दन्त धारी, पुष्पों सहित नवीन मञ्जरी के द्वारा उत्तम भूषण से भूषित कर्णवाले, मणिकंकण से प्रदीप्त, तपाये हुये सुवर्ण की भाँति गौर गौरहरि का भजन करते हैं।।२० हे समस्त भुवन के बन्धु ! हे प्रेम के सागर ! यह जो समस्त कपटों से पूर्ण, ज्ञान रहित, शरणागत जन है इसे आप अपने चरण कमलों की दास्यता दीजिये। इसी से आपका पतिततारण नाम प्रकट होगा॥२१॥ श्रीगौरचन्द्र अत्यन्त करुणा के वश दोनों भुजाओं को ऊपर उठा कर समस्तजनों को हे हे भागवतगणों ! "हरि बोलो हरि बोलो" इस प्रकार कहते हैं। स्वयं प्रेम से नृत्य करते हुए हुँकार करते हैं। "हा हाकार" करते हुए व्याकुल होकर पृथिवी पर गिर पड़ते हैं तथा मूर्च्छित होकर निज हृदय पर हस्त-कमल से प्रहार करते हैं ॥ २२ ॥ "हरे कृष्ण राम" नाम के गानकारी, शोक-लोभ मोह-ताप समस्त विघ्नों के

हरेरामकृष्णनाम गानदानकारिणीं
शोकलोभमोहतापसर्व्वविघ्ननाशिनीम् ।
पादपद्मलुब्धभक्तवृन्दभक्तिदायिनीं
गौरमूर्त्तिमाशु नौमि नामसूत्रधारिणीम् ।। २३
मालती-मल्लिका-दाम-वद्ध-कुञ्चित कुन्तलम् ।
भालोद्यत्तिलकं गण्डरत्नकुण्डल-मण्डितम् ।। २४
श्रीखण्डागुरुलिप्ताङ्गं कंकणाङ्गदभूषितम् ।
क्वणन् मञ्जीरचरणं गौरचन्द्रमहं भजे ।। २५
मधुरं मधुरं कनकाभतनुं अरुणाम्बर सत्परिधेयमहो ।
जगदेकशुभं सकलैकपरं करुणाप्रवणं भजतं परमम् ।। २६
कृष्णरूपं परित्यज्य कलौ गौरो वभूव यः ।
तम्वन्दे परमानन्दं श्रीचैतन्यमहाप्रभुम् ।। २७
पीतांशुकं परित्यज्य शोणाम्बरधरोऽपि यः ।
तं गौरं करुणासिन्धुमाश्रये भुवनाश्रयम् ।। २८

नाशक, चरण कमलों में लुब्ध भक्तवृन्दों के भक्तिदाता, नाम सूत्र धारी, गौरविग्रह का हम शीघ्र ही नमस्कार करते हैं ।। २३ ।। मालती (चमेली) की मालाओं से गुँथे हुए कुञ्चित केश—वाले, ललाट पर मनोहर तिलकधारी, रत्नकुण्डलों से मण्डित गण्ड-वाले, श्रीचन्दन-कस्तूरी लिप्त, कंकण—बाजूबन्द से विभूषित, शब्दायमान नूपुरधारी गौरांगचन्द्र का हम भजन करते हैं ।। २४—२५ ।। अहो ! मधुर से मधुर, कनक कान्तिमान, अरुणाम्बरधारी, जगत के एक मात्र कल्याण स्वरूप, सबसे परे, करुणार्द्र ,परमपदार्थ गौरहरि का भजन करो ।।२६।। जो कलिकाल में कृष्ण रूप का परित्याग कर गौरांग हुए हैं उन परमानन्द चैतन्य महाप्रभु की हम वन्दना करते हैं ।। २७ ।। जो पीताम्बर का परित्याग कर अरुणाम्बर धारण किये हुए हैं, करुणा के

अवतीर्णः पुनः कृष्णो गौरचन्द्रः सनातनः ।
मग्नास्त्रिभागपापे ये तेषां त्राणस्य हेतवे ॥ २९
अवतीर्णे कलौ गौरे चाण्डालाद्याः कुजातयः ।
यावन्तः पापिनश्चापि प्रायशो वैष्णवा अमी ॥ ३०
पतितं दुर्गतं दृष्ट्वा वैष्णवाः लोकपावनाः ।
करौ धृत्वा हरेर्नाम याचन्ते कृपया कलौ ॥ ३१
सङ्कीर्त्तनारम्भकृतेऽपि गौरे धावन्ति जीवाः श्रवणे गुणानि ।
अशुद्धचित्ताः किमु शुद्धचित्ताः श्रुत्वा प्रमत्ताः खलु ते नृनत्तु ॥३२
किमाश्चर्य्यं किमाश्चर्य्यं कलौ जाते शचीसुते ।
स्त्रीबालजड़मूर्खाद्याः सर्वे नामपरायणाः ॥ ३३
चाण्डालयवनाः मूर्खाः सर्वे कुर्व्वन्ति कीर्त्तनम् ।
हरेर्नाम्नां गुणानां च गौरे जाते कलौ युगे ।

सागर, भुवन के आश्रय उन गौरहरि का हम आश्रय ग्रहण करते हैं ॥ २८ ॥ सनातन श्रीकृष्ण पुनः गौरचन्द्र के रूप में अवतीर्ण होने में तीन पाद पापों से मग्न चित्तवाले जनों का उद्धार ही परम कारण है ॥ २९ ॥ इस घोर कलिकाल में गौरचन्द्र के अवतीर्ण होने पर चाण्डालादि कुजाति, महान् से महान् पातकी, प्राय सब ही वैष्णव हो गये ॥ ३० ॥ लोकपावन वैष्णवजन कलियुग में दुर्गत पतितों को देख कर कृपा करते हुए उनके हाथों को पकड़ हरिनाम की याचना करते हैं ॥३१॥श्रीगौरहरिके द्वारा संकीर्त्तन–ध्वनि का आरम्भ करने पर समस्त जीव सुनने के लिये दौड़तेहैं । महा अशुद्धचित्त वाले हों अथवा शुद्धचित्त वाले हों वे सब संकीर्त्तन सुनकर प्रमत्त होकर नृत्य करने लगतेहैं॥३२ यह क्या आश्चर्य्यकी बातहै यह क्या आश्चर्य्यकी बातहै कि श्रीशचीनन्दन के इस कलिकालमें जन्मलेनेपर स्त्री,बालक,जड़,मूर्ख सबही हरिनाम परायण होगये ॥३३॥इस कलिकाल में गौरचन्द्र के जन्म लेने पर

किमद्भुतं गौरहरेश्चरित्रं, ततोऽधिकं तत्प्रियसेवकानाम् ।
संकीर्त्तनामोदजनानुराग प्रेमप्रदानं वितनोति लोके ॥ ३४

सुवलितमणिमालैर्बद्धचूडं मनोज्ञं
सुललितमृदुभाले चन्दनेनानुचित्रम् ।
श्रवणयुगलरन्ध्रे कुण्डलौ यस्य भातौ
हृदि विनिहितहारं नौमि तं गौरचन्द्रम् ॥ ३५

चैतन्यरूपगुणकर्ममनोज्ञवेशं यः सर्व्वदा स्मरति देह मनो-वचोभिः ।
तस्यैव पादतलपद्मरजोभिलाषी सेवां करोमि शत जन्मनि वन्धुपुत्रैः ॥३६

इयं रसज्ञा तव नामकीर्त्तने, श्रोत्रौ मनो मे श्रवणेऽनुचिन्तने ।
नेत्रे च ते रूप निरीक्षणे सदा शिरोऽस्तु चैतन्यपदाभिवन्दने ॥३७

सङ्कीर्त्तनानन्दरसस्वरूपाः प्रेमप्रदानैः खलु शुद्धचित्ताः ।
सर्वे महान्तः किल कृष्णतुल्याः संसारलोकान् परितारयन्ति ॥ ३८

चाण्डाल, पावन, मूर्ख सब ही श्रीहरि के नाम-गुणों का कीर्तन करने लगे ॥ ३४ ॥ श्रीगौरहरि का चरित्र अति अद्भुत है । उनसे उनके प्रिय सेवकों का चरित्र और भी अधिक है कि जो संकीर्त्तन में आनन्द का, भक्तों के प्रति अनुराग का तथा भगवान के प्रति प्रेम प्रदान का विस्तार करते हैं ॥ ३५ ॥ हम उन गौरहरि को नमस्कार करते हैं कि जिनका चूड़ा सुवलित मणिमालाओं से जड़ित है, जो परम मनोहर हैं, जिनका सुललित, कोमल ललाट चन्दन से चित्रित हो रहा है, जिनके कर्णयुगल के छिद्र में कुण्डल शोभायमान हैं तथा हृदय पर जो हार धारण किये हुए हैं ॥ ३६ ॥ जो व्यक्ति श्रीचैतन्यचन्द्र के रूप-गुण-कर्म-मनोहरवेश का सदा सर्वदा देह-मन-वचन से स्मरण करता है, मैं उसका चरणों की रज की अभिलाषा रखता हुआ अपने वन्धु-पुत्रादि के साथ सौ जन्म पर्य्यन्त उसकी सेवा करूँगा ॥ ३७ ॥ हे श्री चैतन्यचन्द्र ! मेरी यह रसना आपके नाम कीर्त्तन में, कर्णयुगल नाम के श्रवण में, मनः अनुचिन्तन में नेत्र दोनों आपके रूप देखने में,

यस्मिन्देशे कुलाचारो धर्म्माचारश्च नास्ति वै ।
तथापि धन्यस्तद्देशः नाम-संकीर्त्तनाद् हरेः ॥ ४०
यावताञ्च कुतन्त्राणां समुद्धारस्य हेतवे ।
अवतीर्णः कलौ कृष्णचैतन्यो जगतांपतिः ॥ ४१
सर्वेऽवतारा भजतां जनानां, त्रातुं समर्थाः किल साधुवार्त्ता ।
भक्तानभक्तानपि गौरचन्द्रस्ततार कृष्णामृतनामदानैः ॥ ४२
चैतन्यः प्रेमदाताखिलभुवनजनान् भावहुङ्कारनादै-
र्गोविन्दाकृष्टचित्तान् कुविषयविरतान् कारयामास शीघ्रम् ।
एवं श्रीगौरचन्द्रे जगति च जनिते वञ्चितो यो हि मूर्खः
तापी पापी सुरापी हरिगुरुविमुखः सर्वदा वञ्चितः सः ॥४३

तथा मस्तक आपके चरण बन्दन में नियुक्त रहें ॥ ३८ ॥ समस्त महानुभाव जन श्रीकृष्ण के तुल्य हैं । वे सब संकीर्त्तन आनन्द-रस रूप हैं तथा प्रेम प्रदान में शुद्ध हृदय वाले हैं और इन संसार के जीवों को तार देते हैं ॥ ३९ ॥ जिस देश में कुलाचार, धर्माचार नहीं है तो भी श्रीहरि का नाम संकीर्तन के कारण वह देश धन्य है ॥ ४० ॥ जितने कुतन्त्र हैं अर्थात् ऊछृङ्खल हैं उन सबका उद्धार के लिये कलिकाल में जगत् के पति श्रीकृष्णचैतन्य ने अवतार लिया ॥ ४१ ॥ समस्त अवतार भजन कारियों का उद्धार करने में समर्थ हैं यह साधुवार्ता प्रसिद्ध ही है परन्तु श्रीगौराङ्गचन्द्र ने कृष्णामृत नाम दान से भक्त-अभक्त सबका उद्धार किया है ॥ ४२ ॥ प्रेमदाता श्रीचैतन्यदेव ने भाव युक्त हुङ्कारनाद से कुविषय रत जगद्वासियों के चित्त को शीघ्र ही गोविन्द में आकृष्ट किया । ऐसे श्रीगौरचन्द्र जगत में जन्म लेने पर उनसे जो वञ्चित हुआ है वह मूर्ख-तापी, पापी, सुरापायी, हरिगुरु से विमुख है तथा सदा सर्व्वदा वञ्चित ही रहा है ॥ ४३ ॥ त्रिभुवन सुन्दर श्रीगौरचन्द्र अवतीर्ण होने पर इस जगत में पतित, यवन,

त्रिभुवनकमनीये गौरचन्द्रेऽवतीर्णे,
पतित-यवनमूर्खाः सर्वदा स्फोटयन्ति ।
इह जगति समस्ता नामसंकीर्त्तनार्त्ता,
वयमपि च कृतार्थाः कृष्णनामाश्रयाद्धि ॥ ४४
मधुरमधुरमेतद्वैष्णवानां चरित्रं,
कलिमलकृतहीनान् दोषबुद्ध्या न जग्मुः ।
सकलनिगमसारं नाम दातुं च तत्र,
प्रवलकरुणया श्रीगौरचन्द्रोऽवतीर्णः ॥ ४५ ॥
लोकान् समस्तान् कलिदुर्गवारिधे नाम्ना समुत्तार्य्य स्वतः समर्पितम् ।
श्रीगौरचन्द्रै हरिवैष्णवानां नाम्नश्च तत्वं कथितं जने जने ॥ ४६ ॥
यावन्तो वैष्णवाः लोके परित्राणस्य हेतवे ।
रटन्ति प्रभुणादिष्टाः देशे देशे गृहे गृहे ॥ ४७ ॥
जगद्बन्धो जगत्कर्त्ता जगतां त्राणहेतवे ।
यत्र यत्र हरेः सेवा कीर्तने स्थापिते सुखे ॥ ४८ ॥

मूर्खादि समस्त जन ही हरिसंकीर्त्तन से आर्त होकर "हम सब श्रीकृष्ण नाम के आश्रय से कृतार्थ हुए हैं" इस प्रकार कहने लगे ॥ ४४ ॥ अहो वैष्णवों का यह मधुर से मधुर चरित्र है कि वे सब कलिमल से सर्व प्रकार रहित हैं, किसी का दोष नहीं देखते हुए समस्त निगमसार हरि नाम का प्रदान करते हैं । इसका प्रधान कारण यह है कि श्री-गौरचन्द्र की प्रवल करुणा से प्रेरित होकर पृथबी पर अवतीर्ण हुए हैं ॥४५॥ अहो श्रीगौरचन्द्र ने समस्तजनों को नाम के द्वारा कलिसागर रूप दुर्ग से उद्धार करके स्वयं उन्हें नाम का दान किया तथा हरि-वैष्णव-नाम का तत्व प्रत्येक व्यक्ति के लिये कहा ॥ ४६ ॥ तब से वैष्णवगण इस संसार का परित्राण के लिये प्रभु के आदेश से देश देश में घर घर में हरिनाम का रटन करने लगे ॥ ४७ ॥ जगत के त्राण के लिये सब कोई "जगद्बन्धो ! जगत्कर्त्ता" इस प्रकार नाममाला का गान

गौराङ्गः प्रेममूर्त्तिर्जगति यदवधि प्रेमदानं करोति,
पापी तापी सुरापी निखिलजनधनस्थाप्यहारी कृतघ्नः
सर्वान् धर्म्मान् स्वकीयान् विषमिव विषयं संपरित्यज्य कृष्णं
गायन्त्युच्चैः प्रमत्तास्तदवधि विकलाः प्रेमसिन्धौ निमग्नाः ॥ ४९ ॥
येषां कस्मिन् युगे नाभून्निस्तारो वहुजन्मनि ।
कलौ ते ते सुखे मग्ना नामगान-प्रसादतः ॥ ५० ॥
हरेर्नाम्नां प्रसादेन निस्तरेत् पातकी जनः ।
उपदेष्टा स्वयं कृष्णचैतन्यो जगदीश्वरः ॥ ५१ ॥
अखिल-भुवन-वन्धुर्नामदाता कृपालुः,
कषित-कनकवर्णः सर्वमाधुर्य्यपूर्णः ।
अति-सुमधुर-हासः स्निग्धदृक् प्रेमभासः,
स्फुरतु हृदयमध्ये गौरचन्द्रो नटेन्द्रः ॥ ५२ ॥
अति-मधुर-चरित्रः कृष्णनामैक-मन्त्रो,
भुवन-विदित-सर्व-प्रेमदाता नितान्तः ।

करने लगे । जहाँ तहाँ श्रीहरि की सेवा की स्थापना हुई । सर्व्वत्र कीर्त्तन का प्रचार होने लगा ॥ ४८ ॥ प्रेममूर्त्ति श्रीगौराङ्गचन्द्र जब से प्रेमदान करने लगे तब से पापी, तापी, सुरापायी, समस्त धन-जन अपहारी, कृतघ्नजन, निज समस्त कर्म्मों को छोड़ कर विषय को विष की भाँति त्याग कर, मतवाले विह्वल होकर प्रेमसागर में निमग्न होते हुए श्रीकृष्ण का गान करने लगे॥४९॥जिनका कभी किसी युग में भी बहुत जन्मों तक निस्तार नहीं हुआ था वे सब अब नामगान की कृपा से प्रेमसुख में निमग्न होने लगे ॥५०॥ हरिनाम के प्रसाद से पातकी जन निस्तार होने लगे । इसके उपदेशक स्वयं जगदीश्वर कृष्णचैतन्य देव हुए ॥५१॥ अखिल-भुवन के वन्धु, नाम के दाता, कृपालु, तप्तसुवर्ण-कान्ति वाले, सकल माधुर्य्य से पूर्ण, अत्यन्त सुमधुर हास्यकारी

विपुल-पुलकधारी चित्तहारी जनानां,
स्फुरतु हृदयमध्ये गौरचन्द्रो नटेन्द्रः ॥ ५३ ॥
सकल-निगमसारः पूर्ण-पूर्णावतारः,
कलि-कलुष-विनाशः प्रेमभक्तिप्रकाशः ।
प्रिय-सहचरसङ्गे रंगभङ्ग्या विलासी,
स्फुरतु हृदय-मध्ये गौरचन्द्रो नटेन्द्रः ॥ ५४ ॥
जगदतुल-मनोज्ञो नाट्य-लीलाभिविज्ञः,
कलित-मधुरवेशैर्मूर्च्छिताशेषदेशः ।
प्रवल-गुण-गभीरः शुद्ध-सत्व-स्वभावः,
स्फुरतु हृदयमध्ये गौरचन्द्रो नटेन्द्रः ॥ ५५ ॥
निरवधि-गलदश्रुः स्वेदयुक्तः सकम्पः,
पुलक-वलित-देहः सर्व-लावण्यगेहः ।
मनसिजशत-चित्त-क्षोभकारी यशस्वी,
स्फुरतु हृदयमध्ये गौरचन्द्रो नटेन्द्रः ॥ ५६ ॥

करुण दृष्टिवाले, प्रेममय, श्रीगौरचन्द्र नटराज हृदय मध्य स्फूर्त्ति को प्राप्त होवें ॥ ५२ ॥ जिनका चरित्र अत्यन्त मधुर है तथा कृष्ण नाम ही जिनका महामन्त्र स्वरूप है, जो समस्त भुवन में सब के प्रेमदाता रूप में अति प्रसिद्ध हैं, वे विपुल पुलकधारी, जनों के चित्तहारी श्री-गौरचन्द्र नटराज हृदय मध्य स्फूर्ति को प्राप्त होंवे ॥ ५३ ॥ समस्त निगम का सार, पूर्णापुर्णावतार, कलिकलुषनाशन, प्रेमभक्ति प्रकाशक, अपने कृपानन्द विलासके द्वारा प्रिय सहचरोंके साथ विलासी, श्रीगौरचन्द्र नटराज हृदय मध्य स्फूर्त्ति को प्राप्त होंवें ॥ ५४ ॥ जो जगत में अतुलनीय मनोहर स्वरूप हैं तथा जो नाट्यलीला में रसिक हैं, मधुरवेश को स्वीकार कर समस्त जगत् के मोहनकारी, प्रवल गुणों से गम्भीर, स्वभाव से शुद्ध सत्ववाले वे गौरचन्द्र नटराज हृदय मध्य में स्फूर्त्ति को प्राप्त होंवें ॥ ५५ ॥ जिनकी अश्रुधारा निरन्तर बहती रहती है तथा

शमन-दमन-नाम-कृष्णनामप्रदानः,
परमपतित-दीन-त्राण-कारुण्यसीमः ।
व्रजविपिन-रहस्य-प्रोल्लसच्चारुगात्रः,
स्फुरतु हृदयमध्ये गौरचन्द्रो नटेन्द्रः ॥ ५७ ॥
सकलरसविदग्धः कृष्णनाम-प्रमादः,
प्रबल-गुण-गभीरः प्राणि निस्तार-धीरः ।
निरुपम-तनुरूपः द्योतितानङ्ग-भूपः,
स्फुरतु हृदयमध्ये गौरचन्द्रो नटेन्द्रः ॥ ५८ ॥
विमल-कमल-वक्त्रः पक्वबिम्बाधरोष्ठ-
स्तिल-कुसुमसुनामः कम्बु-कण्ठः सुदीर्घः ।
सुवलित-भुजदण्डो नाभिगम्भीर-रूपः,
स्फुरतु हृदयमध्ये गौरचन्द्रो नटेन्द्रः ॥ ५९ ॥
कषित-कनक-कान्तिः सारलावण्य-मूर्त्तिः,
कलिकलुष-विहन्ता यस्य कीर्त्तिर्वरिष्ठा ।

जो स्वेदकणिकाओं से शोभित हैं, जिनका शरीर निरन्तर कम्पायमान रहता है तथा जो पुलकावली से भूषित रहते हैं, समस्त लावाण्यता के गृह स्वरूप, शत शत कन्दर्प चित्त क्षोभकारी वे यशस्वी, गौरचन्द्र नटराज हृदय मध्य स्फूर्त्ति को प्राप्त होवें ॥ ५६ ॥ जिन्होंने शमन के दमनार्थ कृष्णनाम का प्रदान किया है तथा जो अत्यन्त पतित-दीन हीन के त्राण करने के लिये करुणा के सीमा स्वरूप हैं, जिनका मनोहर श्री-अंग वृन्दावन रहस्य के आस्वादन में उल्लास को प्राप्त हैं वे श्रीगौर-चन्द्र नटराज हृदय मध्य में स्फूर्त्ति को प्राप्त होवें ॥ ५७ ॥ समस्त रस के रसिक, अर्थात् सर्व्वरस चूड़ामणि स्वरूप, कृष्णनाम में आनन्दित, गुणगम्भीर, प्राणियों के निस्तार में धीर, उपमा रहित सुन्दर रूपवान, शत शत कन्दर्पराज को भी प्रकाशमान करने वाले, श्रीगौरचन्द्र नटराज हृदय मध्य स्फूर्त्ति को प्राप्त होवें ॥ ५८ ॥ विमल कमल वदन,

अखिल-भुवन-लोके प्रेमभक्ति-प्रदाता,
स्फुरतु हृदयमध्ये गौरचन्द्रो नटेन्द्रः ॥ ६०
बहुविधमणिमाला-बद्धकेशो विचित्रः,
मलयज-तिलकोद्यद्भाल-देशेऽलकालिः ।
श्रवण-युगल-लोलत्-कुण्डलो हारवक्षाः,
स्फुरतु हृदयमध्ये गौरचन्द्रो नटेन्द्रः ॥ ६१ ॥
यदवधि हरिनाम प्रादुरासीत् पृथिव्यां
तदवधि खलु लोका वैष्णवाः सर्व एते ।
तिलक-विमलमाला नामयुक्ता पवित्रा,
हरिहरि कलिमध्ये एवमेवं बभूव ॥ ६२

पक्के बिम्बफल की भाँति अधरोष्ठ वाले, तिल-कुसुम सदृश सुन्दर नासिका वाले, कम्बुकण्ठधारी, सुदीर्घ, लम्बायमान भुजदण्डवाले, गम्भीर नाभि से युक्त श्रीगौरचन्द्र नटराज हृदय मध्य स्फूर्त्ति को प्राप्त होवें ॥ ५९ ॥ तप्तसुवर्ण कान्तिधारी, लावण्य सार के मूर्त्तिस्वरूप, कलिकलुष नाशक, श्रेष्ठ कीर्त्तिवाले, अखिलभुवन में प्रेमभक्ति के प्रदाता श्रीगौरचन्द्र नटराज हृदय मध्य स्फूर्त्ति को प्राप्त होवें ॥ ६० ॥ बहु प्रकार मणिमालाओं से जिनके केश बँधे हुए हैं, विचित्र चन्दन लितक से जिनका भालदेश शोभायमान हो रहा है, जिनकी अलकावली सुन्दर से सुन्दर है, जिनके श्रवण युगल चञ्चल कुण्डल युगल से विभूषित हैं तथा जो मनोहर हार वक्षः पर धारण किये हुए हैं वे श्रीगौरचन्द्र नटराज हृदय मध्य स्फूर्त्ति को प्राप्त हों ॥ ६१ ॥ जब से पृथिवी पर हरिनाम का प्रादुर्भाव हुआ है तब से समस्त लोक वैष्णव हो गये । तिलक-विमलमाला-नाम उच्चारण से वे परम पवित्र हो गये ! अहा हा ! कलिकाल में ऐसा होना बड़े आनन्द की बात है

जीवे पूर्णदया यतः करुणया हाहारवैः प्रार्थना
हे हे कृष्ण ! कृपानिधे ! भव-महा-दावाग्निदग्धान् जनान् ।
त्राहि त्राहि महाप्रभो ! स्वकृपया भक्तिं निजां देहि मा–
मेवं गौरहरिः सदा प्रकुरुते दीनैकनाथः प्रभुः ॥ ६३

विषन्नचित्तान्, कलिपापभीतान् सम्प्रीक्ष्य गौरो हरिनाम मन्त्रं ।
स्वयं ददौ भक्तजनान् समादिशेत् कुरुष्व संकीर्त्तन-नृत्य-वाद्यान् ।६४

हरेः मूर्त्तिं सुरूपाङ्गां त्रिभङ्गमधुराकृतिम् ।
इति गौरो वदेत् भक्तान् स्थापयस्व गृहे गृहे ॥ ६५
सुशोणपद्म-पत्राक्षः सुविम्बाधरपल्लवः ।
सुनासा-पुट-लालित्य गौरचन्द्र नमोऽस्तु ते ॥ ६६
कन्दर्प कोटि-लावण्य कोटि-चन्द्राननत्विषे ।
कोटि-कारुण-पुष्पाभ गौरचन्द्र नमोस्तु ते ॥ ६७

॥ ६२ ॥ अब ही जीव के प्रति पूर्ण दया का प्रकाश हुआ जब कि दीन हीन जनों के एक मात्र नाथ गौरहरि करुणा के वश होकर "हे हे कृष्ण, हे कृपासागर ! भवमहा-दावाग्नि से दग्ध जीवों का त्राण कीजिये त्राण कीजिये हे महाप्रभो निज करुणा से इन सबको निज भक्ति का प्रदान कीजिये" इस प्रकार हा हाकार करते हुए प्रार्थना करने लगे ॥ ६३ ॥ श्रीगौरहरि ने कलिपाप से भयभीत, विषाद पूर्ण जनों को देख कर स्वयं हरिनाम मन्त्र का प्रदान किया तथा भक्तों को संकीर्तन-नृत्य-वाद्य करने का आदेश दिया ॥ ६४ ॥ श्रीगौरहरि ने भक्तों को यह आदेश दिया कि घर घर में त्रिभंग-मधुराकार श्याम-सुन्दर विग्रह की स्थापना करो ॥ ६५ ॥ हे जल रहित कमलदल के समान मुख वाले ! हे सुन्दर बिम्बाधर वाले ! हे सुन्दर नासापुटों से मनोहर गौरचन्द्र ! आपको नमस्कार ॥ ६६ ॥ हे गौरचन्द्र ! हे कोटि-कन्दर्प लावण्य वाले !, हे कोटि-चन्द्रमा कान्ति सदृश आनन वाले !,

सुमुक्ता-दन्त-पङ्क्त्याभ हास्य-शोभा-शुभाकर ।
हंसग्रीव-लसत्कण्ठ गौरचन्द्र नमोस्तु ते ॥ ६८
मल्लिमालोल्लसद्वक्षाः कर्णालम्बितमौक्तिकः ।
कङ्कणाङ्गदसंयुक्त महाभूज नमोऽस्तु ते ॥ ६६
मृगेन्द्र-मध्य-कङ्काल जानु-रम्यातिसुन्दर ।
कूर्म्म-पृष्ठ-पदद्वन्द गौरचन्द्र नमोऽस्तु ते ॥ ७०
आश्रये तव पादाब्जं कलिका-चम्पकाङ्गुलम् ।
कृपां कुरु दयानाथ ! गौरचन्द्र नमोऽस्तु ते ॥ ७१
नखपंक्ति-जितानेक-माणिक्यमुकुरद्यु ते ।
चरणे शरणं याचे गौरचन्द्र नमोऽस्तु ते ॥७२
ध्वज-वज्राङ्किते पादपद्मेऽहं शरणं गतः ।
करिष्यति यमः किं मे गौरचन्द्र नमोऽस्तु ते ॥७३

हे कोटि अरुण पुष्प की भाँति कान्ति वाले! आपको नमस्कार है ॥६७॥ हे सुन्दर मुक्ता की भाँति दंतपङ्क्तिवाले ! हे हास्य शोभा से शुभ्रमय ! हे हंस की तरह ग्रीवावाले ! हे शोभितकण्ठ ! हे गौरचन्द्र ! आपको नमस्कार ॥ ६८ ॥ हे चमेली मालाओं से शोभित वक्षःवाले ! हे कर्णों में लम्बायमान मुक्ताधारि ! हे कंकण-अङ्गदादिओं से युक्त विशाल भुज वाले ! आपको नमस्कार है ॥ ६६ ॥ हे सिंह-कटिवाले ! हे जानुओं की सुन्दरता से अतिसुन्दर! हे, कूर्म्मपीठ की भाँति चरण वाले! हे गौरचन्द्र ! आपको नमस्कार है ॥ ७० ॥ हे गौरचन्द्र ! चम्पक कलिका की भाँति अंगुलिओं से शोभित श्रीपादपद्म का हम आश्रय करते हैं । हे दयानाथ ! कृपा कीजिये, आपको नमस्कार है ॥ ७१ ॥ हे गौरचन्द्र ! आपकी नखपंक्तियाँ अनेकानेक मणिमय मुकुर की कान्ति को जय कर रही हैं। मैं आपके चरण की शरण चाहता हूँ। आपको नमस्कार है ॥ ७२ ॥ हे गौरचन्द्र ! ध्वज-वज्रादि चिन्हित आपके चरण कमलों की मैं शरण आया हूँ। अब मेरा यमराज क्या

शत-शत-पतितानां त्राण-कर्त्ता प्रभुस्त्वं-
कथमपि किमु दोषै र्वञ्चितोऽहं प्रपन्नः ।
कलिभयकृत-भीतं, त्राहि मां दीनबन्धो !
शरणागतगतिस्त्वं किं ब्रुवे गौरचन्द्र ! ॥ ७४

किमद्भुतं गौरहरेश्चरित्रं, नामोपदेशाद्धरिमाश्रयन्ति ।
नृत्यन्ति गायन्ति रुदन्ति लोका रटन्ति अर्थान् हरि-भक्ति युक्ताः॥७५
निरन्तरं कृष्ण-कथा-परस्परं, सुभक्तिदं नाम हरेर्वदन्ति वै ।
जल्पन्ति लोका भुविभाव-विह्वलाः गौरेऽवतीर्णे कलिपापनाशके॥७६

सत्य-त्रेता द्वापरेषु यज्ञ-दान-तपो-व्रतैः ।
केषां केषां फलं जातं, शुद्ध धर्म्म-विधानतः ॥ ७७
कलौ श्रीगौर-कृपया नाम-मात्रैकजल्पकाः ।
कृष्णसान्निध्य-सम्प्राप्ताः प्रेम भक्ति-परायणाः ॥ ७८

कर सकता है । आपको नमस्कार है ॥ ७३ ॥ हे गौरचन्द्र ! आप शत शत पतितों के त्राणकारी हैं, प्रभु हैं । शरणागत मैं किस दोष से क्यों वञ्चित हो रहा हूँ । हे दीनबन्धु ! कलिभय से भय भीत मेरा त्राण कीजिये । आप तो शरणागत जन की गति हैं ॥ ७४ ॥ अहो श्रीगौरहरि का चरित्र अति अद्भुत है । लोग सकल नाम के उपदेश से ही हरि का आश्रय करने लगे तथा हरिभक्ति परायण होकर नृत्य-गान-रोदन करने लगे तथा नाम की महिमा रटन करने लगे॥७५ अहो कलिपापनाशन श्रीगौरहरि पृथिवी में अवतीर्ण होने पर लोग सकल निरन्तर परस्पर में कृष्ण-कथा का आलाप करने लगे तथा भक्तिदानकारी हरि के नाम का रटन करते हुए भावविह्वल होने लगे ॥ ७६ ॥ सत्य-त्रेता-द्वापर युग में यज्ञ-दान-तपो-व्रतादि से शुद्ध धर्म्म विधान के द्वारा जो जो फल मिला है वह प्रसिद्ध है । कलिकाल में श्रीगौरहरि की कृपा से ही सब किसी ने नाम मात्र का जप करके प्रेम भक्ति परायण होकर कृष्णसान्निध्य प्राप्त किया है ॥ ३७-३८ ॥ हरे

अनु ब्रह्माण्डयोर्मध्ये चैतन्येन समाहृतम् ।
हरे कृष्ण राम नाम मालां भक्ति परायणाः ॥ ७९
जल्पन्ति हरि-नामानि चैतन्यज्ञान-रूपतः ।
भजन्तु वैष्णवान् ये तु ते गच्छन्तु हरेः पदम् ॥ ८०
शृण्वन्ति ये वै गुरुतत्त्व-गाथां, गायन्तियत्नैर्हरिनाम-मन्त्रम् ।
पूज्यन्ति साधुं गुरुदेवताश्च चैतन्य-भक्ताः कलिकालमध्ये ॥ ८१
कृष्णचैतन्यदेवेन हरिनाम-प्रकाशितम् ।
येन केनापि तत्प्राप्तं, धन्योऽसौ लोकपावनः ॥ ८२
यदि स्याद्वैष्णवे प्रीतिः सदा कीर्त्तनलम्पटः ।
गौराङ्गचन्द्र-विमुखो न वै भागवतोऽपि सः ॥ ८३
अनन्यचेता हरिमूर्तिसेवां करोति नित्यं यदि धर्म्मनिष्ठः ।
तथापि धन्यो नहि तत्त्ववेत्ता, गौराङ्गचन्द्रे विमुखो यदि स्यात्॥८४

कृष्ण राम नाम की माला पहले चैतन्यचन्द्र ही पृथिवी पर लाये। जिससे सब कोई भक्तिपरायण हुए ॥ ७९ ॥ श्रीचैतन्य स्वरूप के ज्ञान मात्र से ही सब कोई हरिनाम का जप-कीर्त्तन करने लगे तथा वैष्णवों का भजन करने लगे जिसके कारण वे हरि के चरणों को प्राप्त हुए ॥ ८० ॥ जो सब जन गुरुतत्व की कथा को श्रवण करते हैं तथा हरि-नाम मन्त्र का यत्न के साथ गान करते हैं साथ ही साथ साधु-गुरु-देवताओं का पूजन करते हैं वे सब कलियुग में चैतन्य-भक्त हैं ऐसा जानना चाहिए ॥८१॥ श्रीकृष्णचैतन्यदेव ने हरिनाम का प्रकाश किया है। जिसने जिस किसी प्रकार से हरिनाम को प्राप्त किया वह धन्य है तथा लोक पावन है ॥ ८२ ॥ यदि किसी की वैष्णव में प्रीति है तथा वह कीर्त्तन में सर्वदा लम्पट रहता है तथापि यदि वह गौरांगचन्द्र में विमुख है वह भागवत नहीं माना जाता है ॥ ८३ ॥ यदि कोई अनन्य चित्त होकर हरिमूर्त्ति की सेवा करे तथा नित्य धर्म्मनिष्ठ रहे

किमु सुखमुपभोक्तुं, बाञ्छयेद्वञ्चितोऽसौ
सकल-निगम-सिद्धं गौरचन्द्रं न वेत्ति ।
हरि हरि कथमेतद् कुत्र यातं चरित्रं,
स भव-जलधिमध्ये कुम्भिपाके पपात ॥ ८५
शची-सुत-पदाम्बुजे शरण-मात्रमन्वेषणं-
करोमि कुलदैवते प्रबलकातरे वैष्णवाः ।
कृपां कुरुत सर्वदा मयि, विचित्रवाञ्छास्पदं
मम प्रणत चेतसो भवतु सिद्धिरव्याहता ॥ ८६
न धनं न यशो न कुलं न तपो, न जनं न शुभं न सुतं न सुखं ।
चरणे शरणं तव गौरहरे, मम जन्मनि जन्मनि देहि वरं ॥ ८७
नाना क्लेशामयायुक्तं स्मृतिहीनञ्च मां प्रभो !
भवभीताद् गौरचन्द्र ! त्राहि त्राहि कृपानिधे ॥ ८८

तथापि यदि गौराङ्गचन्द्र से विमुख हो तो वह तत्ववेत्ता नहीं माना जाता है ।।८४।। समस्त निगम सिद्ध श्रीगौरचन्द्र को जो नहीं जानता है परन्तु फिर भी परमसुख को चाहता है तो वह समस्त सुख से वञ्चित रहता है । हाय हाय ऐसा क्यों होता है ? उसका सुन्दर चरित्र कहाँ चला जाता है ? वह संसार सागर में कुम्भिपाक नरक में गिरता है ।। ८५ ।। कुलदेवता श्रीशचीसुत के चरण कमल की परम कातरता के साथ में शरण की खोज करता हूँ । हे वैष्णवगण ! इस प्रकार विचित्र वाञ्छातीत वस्तु के अन्वेषणकारी, मुझ पर कृपा कीजिये । मेरे प्रणत हृदय में इस प्रकार की अव्याहत सिद्धि हो ।।८६।। मैं धन, यश, कुल, तपः, जन, कल्याण,पुत्र, सुखादि कुछ नहीं माँगता हूँ । हे गौरहरि ! यह वर दीजिये कि मैं शत शत जन्मावधि आपके श्रीचरणों की शरण रहूँ ।। ८७ ।। मैं नाना प्रकार के क्लेशों से युक्त हूँ उससे स्मृतिहीन हो रहा हूँ । हे कृपानिधि गौरांगचन्द्र ! मुझको

अनेक जन्म भ्रमणे मनुष्योऽहं भवन् कलौ।
व्याकुलात्मा पदाब्जे ते शरणं रक्ष मां प्रभो ॥ ८९
कातरं पतितं शौच्यं त्राहि मां श्रीशचीसुत।
सर्व्वे प्रेमसुखे मग्नाः वञ्चितं मा कुरु प्रभो ! ॥ ९०
सर्व्वेषां पाप-युक्तानां त्रातुं शक्तोऽन्यदैवतः।
ममोद्धारे प्रभुर्गौरो यतः पतित-पावनः ॥ ९१
श्रीगौरचरणद्वन्दे याचे याचे पुनः पुनः।
जीवने मरणे क्वापि तव रूपं विचिन्तये ॥ ९२
कृष्णस्त्वं द्वापरे श्यामं कलौ गौराङ्गविग्रहम्।
धृत्वाशेषजनान् प्रेमभक्तिं यच्छसि लीलया ॥ ९३

भव भय से त्राण कीजिये, त्राण कीजिये ॥८८॥ मैं अनेक जन्म भ्रमण के बाद सम्प्रति मनुष्य योनि को प्राप्त हुआ हूँ तथा मेरी आत्मा व्याकुल हो रही है। हे प्रभो! मैं आपके चरण कमलों की शरण आया हूँ, मेरी रक्षा कीजिये॥ ८९ । हे शचीनन्दन ! मैंने सब कुछ कर्म किया तथा मैं परम पतित, घृणित हूँ। मेरा त्राण कीजिये। सब कोई प्रेम सुख में मग्न हो रहे हैं। मुझको ही वञ्चित मत कीजिये॥ ९०॥ सब पापियों के उद्धार करने के लिये तो अन्यदेवता भी हैं परन्तु मेरे तो उद्धार कर्ता प्रभुवर श्रीगौरांग देव हैं क्यों कि वे पतित-पावन हैं ॥ ९१ ॥ श्रीगौराङ्ग प्रभु के चरण कमल में पुनः पुनः यही याचना करता हूँ कि मैं जीवित रहूँ अथवा मेरी मृत्यु हो जाय सब अवस्थाओं में जहाँ तहाँ आपके रूप का ही चिन्तन करता रहूँ ॥ ९२॥ हे श्रीकृष्ण ! आप द्वापर में श्याम स्वरूप हैं। सम्प्रति कलियुग में लीला से गौरांगविग्रह धारण कर समस्त जनों के लिये प्रेमभक्ति का प्रदान कर रहे हैं ॥ ९३ ॥ हे गौरहरि ! जो मेरे मन में इच्छाएँ उदय हुईं उन्हें आपके चरणकमलों में निवेदन किया। देह-वच-मनः से

यथेप्सितं गौरपदारविन्दे निवेदितं देहमनोवचोभिः।
सर्व्वार्थसिद्धिं कुरु मे कृपालो, निरन्तरं ते स्मृतिरस्तु नित्या ॥ ९४
स्वतन्त्रस्य प्रभोरेव लीला-मनुज-विग्रहम्।
धृत्वा लोकपरित्राणं कृतवान् हरिनामभिः ॥ ९५
अनाथवन्धो ! करुणैकसिन्धो ! संसारवन्धात्कुरु मां विमुक्तम्।
भ्रमामि तीर्थान् तव नाम गानैः दृष्ट्वा महत्वान् हरिदेवरूपान्॥ ९६
यदुक्तं यत् कृतं पूर्व्वं यच्छ्रुतं यन्मनो गतम्।
सर्व्वं क्षमस्व हे गौर ! त्वत्स्मृतिः स्यात्सदा मम ॥ ९७
लज्जां त्यक्त्वा पदे याचे भक्तिं मां प्रेमलक्षणाम्।
देहि गौर कृपासिन्धो, तद्विना नास्ति दुःखहा ॥ ९८
अनेक-जन्मकृतमज्जनाब्धौ, सिद्धिं कुरुष्व प्रभुगौरचन्द्र।
समुज्ज्वलां ते पद-पद्म-सेवां करोमि नित्यं हरि कीर्त्तनञ्च ॥ ९९
ब्रजेन्द्र—नन्दनाभिन्नं गौराङ्ग त्वां निवेदये।
कृपां कुरु दयानाथ, सर्वसेवां करोम्यहम् ॥ १००

मैं आपका हूँ। हे कृपालु ! मेरे सर्व्वार्थ सिद्धि कीजिये। निरन्तर आप में मेरी अचला स्मृति हो ॥ ९४ ॥ स्वतन्त्र प्रभु की यह मनोहर लीला है कि आपने मनुष्य शरीर का धारण कर हरिनाम के द्वारा सबका परित्राण किया है ॥ ९५ ॥ हे अनाथ-वन्धो ! हे करुणा के एक मात्र सागर ! मुझको संसार वन्धन से मुक्त कीजिये। मैं आपका नाम गान करता हुआ महात्माओं को हरिस्वरूप जान कर तीर्थों में भ्रमण करूँगा ॥ ९६ ॥ हे गौरचन्द्र ! मैंने जो कुछ कहा तथा जो कुछ मैंने किया, पहले जो कुछ सुना और जो कुछ मन में था उन सब की क्षमा कीजिये। मेरी स्मृति सर्व्वदा आप में हो ॥ ९७॥ हे करुणासागर गौरचन्द्र ! मैं लज्जा को छोड़ कर आपके चरणों में यही याचना करता हूँ कि मुझे प्रेमलक्षणा भक्ति दीजिये। आपके बिना मेरे दुःख का हरणकारी अन्य कोई नहीं है ॥ ९८ ॥ हे गौर-

गीयते ये रतित्वेन, चैतन्यशतकं मुदा ।
यः पठेच्छ्रूयते नित्यं प्राप्तिस्याच्छ्रीशचीसुते ॥१०१

समाप्तम्

बैराग्य-विद्यानिजभक्तियोग शिक्षार्थमेकः पुराणः पुरुषः ।
श्रीकृष्णचैतन्यशरीरधारी कृपाम्बुधिर्यस्तमहं प्रपद्ये ॥ १
कालान्नष्टं भक्तियोगं निजं यः प्रादुष्कर्तुं कृष्णचैतन्यनामा ।
आविर्भूतस्तस्य पदारविन्दे गाढं गाढं लीयतां चित्तभृङ्गः ॥ २

चन्द्र ! मैं अनेक जन्म पर्यन्त भवसागर में डूबा रहा । अब मेरी रक्षा कीजिये । अब यही सिद्धि दीजिये कि परम ऊज्वल आपकी चरणसेवा करता रहूँ तथा नित्य हरिकीर्त्तन में उन्मुख रहूँ ॥ ९९ ॥ हे श्री-गौराङ्ग ! हे ब्रजेन्द्रनन्दन से अभिन्न ! मैं आप से निवेदन करता हूँ । हे दयानाथ ! कृपा कीजिये । आपकी सकल प्रकार की सेवा करता रहूँ ॥ १०० ॥ जो हर्षपूर्वक परम प्रीति के साथ इस चैतन्य-शतक का गान करेगा तथा जो नित्य पढ़ेगा-सुनेगा उसके शचीनन्दन की प्राप्ति अवश्य होगी ॥ १०१ ॥

श्री श्री गौराङ्गाष्टोत्तरशतनामस्तोत्रम्

नमस्कृत्वा प्रवक्ष्यामि देवदेवं जगद्गुरुम् ।
नाम्नामष्टोत्तरशतं चैतन्यस्य महात्मनः ॥ १
विश्वम्भरो जितक्रोधो मायामानुषविग्रहः ।
अमायी मायिनां श्रेष्ठो वरदेशो द्विजोत्तमः ॥ २
जगन्नाथप्रियसुतः पितृभक्तो महामनाः ।
लक्ष्मीकान्तः शचीपुत्रः प्रेमदो भक्तवत्सलः ॥ ३
द्विजप्रियो द्विजवरो वैष्णवप्राणनायकः ।
द्विजातिपूजकः शान्तः श्रीवासप्रिय ईश्वरः ॥ ४
तप्तकाञ्चनगौराङ्गः सिंहग्रीवो महाभुजः ।
पीतवासा रक्तपट्टः षड्भुजोऽथ चतुर्भुजः ॥ ५
द्विभुजश्च गदापाणिः चक्री पद्मधरोऽमलः ।
पाञ्चजन्यधरः शार्ङ्गी वेणुपाणिः सुरोत्तमः ॥ ६
कमलाक्षेश्वरः प्रीतो गोपीलीलाधरो युवा ।
नीलरत्नधरो रूप्यहारो कौस्तुभभूषणः ॥ ७
श्रीवत्सलाञ्छनो भास्वन्मणिधृक् कंजलोचनः ।
ताडङ्कनीलश्रीः रुद्रलीलाकारी गुरुप्रियः ॥ ८
स्वनामगुणवक्ता च नामोपदेशदायकः ।
आचण्डालप्रियः शुद्धः सर्व्वप्राणिहिते रतः ॥ ९
विश्वरूपानुजः सन्ध्यावतारः शीतलाशयः ।
निःसीमकरुणो गुप्त आत्मभक्तिप्रवर्त्तकः ॥ १०
महानन्दो नटो नृत्यगीतनामप्रियः कविः ।
आर्त्तिप्रियः शुचिः शुद्धो भावदो भगवत् प्रियः ॥ ११
इन्द्रादिसर्व्वलोकेशवन्दितश्रीपदाम्बुजः ।
न्यासिचूड़ामणिः कृष्णः सन्न्यासाश्रमपावनः ॥ १२

चैतन्यः कृष्णचैतन्यो दण्डधृक् न्यस्तदण्डकः ।
अवधूतप्रियो नित्यानन्दषड्भुजदर्शकः ॥ १३
मुकुन्दसिद्धिदो दीनो वासुदेवामृतप्रदः ।
गदाधरप्राणनाथ आर्त्तिहा शरणप्रदः ॥ १४
अकिञ्चनप्रियः प्राणो गुणग्राही जितेन्द्रियः ।
अदोषदर्शी सुमुखो मधुरः प्रियदर्शनः ॥ १५
प्रतापरुद्रसंत्राता रामानन्दप्रियो गुरुः ।
अनन्तगुणसम्पन्नः सर्व्वतीर्थैकपावनः ॥ १६
वैकुण्ठनाथो लोकेशो भक्ताभिमतरूपधृक् ।
नारायणो महायोगी ज्ञानभक्तिप्रदः प्रभुः ॥ १७
पीयूषवचनः पृथ्वीपावनः सत्यवाक् सहः ।
ओड्रदेशजनानन्दी सन्दोहामृतरूपधृक् ॥ १८
यः पठेत् प्रातरुत्थाय चैतन्यस्य महात्मनः ।
श्रद्धया परयोपेतः स्तोत्रं सर्व्वाघनाशनम् ॥ १६
असाध्यरोगयुक्तोऽपि मुच्यते रोगसंकटात् ।
सर्व्वापराधयुक्तोऽपि सोऽपराधात् प्रमुच्यते ॥ २०
फाल्गुनीपौर्णमास्यान्तु चैतन्यजन्मवासरे ।
श्रद्धया परया भक्त्या महास्तोत्रं जपन् पुरः ॥ २१
यत् यत् प्रकुरुते कामं तत् तदेवाचिराल्लभेत् ॥
अपुत्रो वैष्णवपुत्रं लभते नात्र संशयः ।
अन्ते चैतन्यदेवस्य स्मृति र्भवति शाश्वती ॥ २२

इति श्रीलसार्व्वभौमभट्टाचार्य्यविरचितं सर्व्वापराधभञ्जनं नाम श्रीचैतन्याष्टोत्तरशतनामस्तोत्रं सम्पूर्णम् ॥

—:※:—

गौड़ीयग्रन्थगौरव:-

ब्रजभाषा में प्रकाशित प्राचीन पुस्तकें—

(१) गदाधरभट्टजी की वाणी		॥)
(२) सूरदासमदनमोहनजी की वाणी		॥)
(३) माधुरीवाणी	(माधुरी जी कृता)	॥=)
(४) वल्लभरसिकजी की वाणी		।=)
(५) गीतगोविन्दपद	(श्रीरामरायजी कृत)	।)
(६) गीतगोविन्द	(रसजानिवैष्णवदासजी कृत)	।)
(७) हरिलीला	(ब्रह्मगोपालजी कृता)	=)
(८) श्रीचैतन्यचरितामृत	(श्रीसुबलश्यामजी कृत)	५॥)
(९) वैष्णववन्दना (भक्तनामावली)	(वृन्दावनदासजी कृता)	=)
(१०) विलापकुसुमाञ्जलि	(वृन्दावनदासजी कृता)	।)
(११) प्रेमभक्तिचन्द्रिका	(वृन्दावनदासजीकृता)	।)
(१२) प्रियादासजी की ग्रन्थावली		।=)
(१३) गौराङ्गभूषणमञ्जावली	(गौरगनदासजी कृता)	।)
(१४) राधारमणरससागर	(मनोहरजी कृत)	।)
(१५) श्रीरामहरिग्रन्थावली	(श्रीरामहरिजी कृता)	।–)
(१६) भाषाभागवत (दशम, एकादश, द्वादश)	(श्रीरसजानि-वैष्णवदासजी कृत)	

सानुवाद संस्कृत भाषा में—

(१) अर्च्चाविधिः (संगृहीत) ।)
(२) प्रेमसम्पुटः (श्रीविश्वनाथचक्रवर्तीजीकृत) ।)
(३) भक्तिरसतरङ्गिणी (श्रीनारायणभट्टजीकृता) १)
(४) गोवर्द्धनशतक (श्रीविष्णुस्वामी संप्रदायाचार्य्य श्रीकेशवाचार्य्य कृत) ।)
(५) चैतन्यचन्द्रामृत और सङ्गीतमाधव (श्रीप्रवोधानन्द-सरस्वतीजी कृत) १।)
(६) नित्यक्रियापद्धति (संगृहीत) ॥=)
(७) ब्रजभक्तिविलास (श्रीनारायणभट्टजी कृत) २॥)
(८) निकुञ्जरहस्यस्तव (श्रीमद्रूपगोस्वामि कृत)
(९) महाप्रभुग्रन्थावली (श्रीमन्महाप्रभुमुखपद्मविनिर्गता) ।-)
(१०) स्मरणमङ्गलस्तोत्रं (श्रीमद्रूपगोस्वामिजीकृत) ।=)
(११) नवरत्नं (श्रीहरिरामव्यासजी कृत) =)।
(१२) श्रीगोविन्दभाष्यं (श्रीपादबलदेवजी कृत) ४॥)
(१३) ग्रन्थरत्नपञ्चकम् १॥)
श्रीराधाकृष्णगणोद्देशदीपिका (श्री श्रीरूपगोस्वामिजीकृता)
श्रीगौरगणोद्देशदीपिका (श्रीकविकर्णपूरजी कृता)
श्रीब्रजविलासस्तवः (श्रीश्रीरघुनाथदासगोस्वामिजीकृत)
श्रीसंकल्पकल्पद्रुमः (श्रीविश्वनाथ चक्रवर्तीजी कृत)
(१४) श्रीमहामन्त्रव्याख्याष्टकम् (सञ्चित)
(१५) ग्रन्थरत्नषट्कम् (सञ्चित) ॥)
(१६) श्रीगोवर्द्धनभट्टग्रन्थावली
(१७) सहस्रनामत्रयम् अथवा ग्रन्थरत्ननवकम्

मुद्रक—रमनलाल बंसल, पुष्पराज प्रेस, मथुरा ।